हिन्दी मासिक

ओ३म्

एक प्रति मूल्य 12/-

जनज्ञान

नवम्बर 2007 वर्ष:४२ अंक:७ कार्तिक–मार्गशीष २०६४

दीपोत्सव पर राष्ट्र के
ज्योतित स्वरूप की कामना

जनज्ञान के सहयोगी पाठकों से आह्वान्!

कम से कम एक और परिवार में पहुँचाएं जनज्ञान

'जनज्ञान' वैदिक संस्कृति, विशुद्ध राष्ट्रवाद तथा सबल समर्थ राष्ट्र के सृजन का प्रेरक माध्यम है। पत्रिकाएं तो सैकड़ों हैं। उनमें से अधिसंख्य विशुद्ध व्यावसायिक हैं, जबकि जनज्ञान एक 'अभियान' का सशक्त स्वर है। विद्यमान सामाजिक, राज़नीतिक तथा राष्ट्र से संबद्ध विषयों पर निर्भीक टिप्पणियां जनज्ञान की विशेषता है।

- यह अभियान है आर्य मर्यादा के प्रति जागरण का।
- यह अभियान है हिन्दुत्व के तर्कसंगत पृष्ठपोषण का।
- यह अभियान है सामाजिक समता भाव के स्फुरण का।
- यह अभियान है देशद्रोही तत्वों से समाज को बचाने का।
- यह अभियान है अपने बिछुड़े बंधुओं को पुनः साथ लाने का।
- यह अभियान है तुष्टीकरण के चक्रव्यूह से राजनीति को छुड़ाने का।
- यह अभियान है कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के उद्घोष को गुंजाने का।
- यह अभियान है हिन्दुत्व के विश्वबंधुत्वमय स्वरूप को दर्शाने का।
- यदि यह अभियान आपको प्रिय है तो सहयोग का हाथ बढ़ाइये।
- अपने मित्रों, परिजनों में कम से कम एक और जनज्ञान को सदस्य बनाइए।
- यही है परिस्थिति का आह्वान्। घर-घर पहुंचे जनज्ञान।
- सामग्री प्रकाशन में आपके सुझाव का होगा स्वागत।
- क्योंकि आप हमारे परिजन हैं, नहीं हैं अभ्यागत।

वार्षिक शुल्क १०० रु. है।

-सम्पादक

जनज्ञान मासिक मंगाने के नियम

1. जनज्ञान के पाठक पत्र व्यवहार करते समय अपनी सदस्य संख्या अवश्य लिखें (सदस्य संख्या : जनज्ञान के रैपर पर लिखे पते के साथ अंकित रहती है।)
2. 'जनज्ञान' प्रतिमाह पांच और छः तारीख को पाठकों को भेज दिया जाता है।
3. मास के अन्त तक 'जनज्ञान' न मिले तो शिकायत आने पर दोबारा भी भेज दिया जाता है।
4. 'जनज्ञान' की एक प्रति का मूल्य बारह रुपये, वार्षिक शुल्क 100 रुपये है।
5. शुल्क समाप्ति की सूचना प्रत्येक सदस्य को एक मास पहले भेज दी जाती है। पत्र के साथ मनीआर्डर फार्म और पोस्टकार्ड संलग्न होता है। कृपया पोस्टकार्ड पर उत्तर अवश्य दें।
6. आगामी वर्ष के लिए शुल्क मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा अथवा दिल्ली के किसी भी बैंक के चैक द्वारा भेज सकते हैं। शुल्क प्राप्त न होने पर अगला अंक वार्षिक शुल्क के साथ वी. पी. द्वारा भेजा जाता है।
7. वी. पी. में पच्चीस रुपये डाकव्यय अतिरिक्त लगता है जिसका लाभ न तो सदस्यों को और न ही संस्था को होता है। अतः कृपया सूचना मिलते ही धन तुरन्त मनीआर्डर द्वारा भेज देवें अथवा संलग्न कार्ड पर उत्तर अवश्य दें।

-सम्पादक

॥ ओ३म् ॥

जनज्ञान

वेद
ऋक् यजु साम अथर्व

कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्

जनज्ञान प्रकाशन
नई दिल्ली - 5

हिन्दू राष्ट्र स्थापना हेतु संघर्ष करो

सम्पर्क-स्थल
2286 आर्यसमाज मार्ग, करोलबाग,
नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 28752741, 41004741

मुख्यालय
वेदमन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम
(इब्राहीमपुर) पो. मुखमेलपुर
दिल्ली-110036

संस्थापक : स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः

सम्पादक : **पंडिता राकेश रानी**
सह-सम्पादक : **दिव्या आर्य**

वार्षिक शुल्क -100 रु0
एक प्रति - 12 रुपये
विदेश में **वार्षिक शुल्क**-450 रु.
(हवाई जहाज से) **वार्षिक शुल्क**-800 रु.
नवम्बर, 2007 वर्ष 42 अंक 7

सम्पादकीय

जले नवल प्रदीप, अंधकार नष्ट हो गया

गहन तिमिर-निविड़ अंधकार में प्रकाश की सुवर्ण किरण उमगे और हम सबका अन्तस आलोकित हो और बाहर भी न तमस हो, 'तमसोमाज्योर्तिगमय' इस कामना को द्युतिमान कर रहा है 'जनज्ञान' का यह अंक। ज्योति के इस पावन प्रेरक पर्व पर हम मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम द्वारा भौतिक समृद्धि से परिपूरित किंतु मर्यादाओं से रीती लंका की राक्षसी सत्ता को विध्वंसित कर अयोध्या पुनरागमन की स्मृति अपने हृदय पटल पर उभरती पाएंगे। पाश्चात्य वैचारिक अंधड़ में अपने अतीत को विलगा देने वाले सुधिजन भी मन ही मन तो उनका स्मरण करेंगे मगर प्रकटतः उनकी महिमा का उच्चारण करते हुए सकुचाएंगे। बुद्धि के इन खारे, सागरों-महासागरों की स्मृति गागर से राम सेतु भले ही विस्मृत हो रहा हो किंतु स्वदेश की पावन माटी के प्रति निष्ठावान जन-गण के स्मृति पटल पर तो यह पावन पर्व भगवान महावीर, गौतम बुद्ध, दशमेश गुरु गोविन्द सिंह, महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती एवम् स्वामी रामतीर्थ सरीखे महान मनीषियों के प्रेरक जीवन वृत्त भी उभारेगा ही।

इन सभी वरेण्य और स्मरणीय महामानवों के तपःपूत जीवन हमें स्मरण दिलाते हैं कि अन्ततोगत्वा सत्य ही असत्य को पराजित कर अपना विजयकेतु फहराता है, न्याय के समक्ष अन्याय पराभूत हो जाता है। त्याग, तपश्चर्या और बलिदान के बल पर ही इन युग पुरुषों ने कुविचारों को भस्मीभूत कर सुविचारों को समाज में पुनः प्रतिष्ठित किया था।

विजय के पर्व विजयादशमी के परिपालन के पश्चात् ही तो दीपमालिका का यह पर्व परिपालित होता है। और तब नगाधिराज हिमालय की उत्तुंग शैल मालाओं से लेकर कन्याकुमारी तथा कच्छ से कामरूप तक अमावस्या के गहन तिमिर को तिरोहित करने हेतु ग्राम-ग्राम और नगर-नगर तथा डगर-डगर तक नन्हीं-नन्हीं दीप वर्तिकाएं सज उठती हैं। कृषि और ऋषि परम्परा से समृद्ध राष्ट्र में सामान्य कृषक और श्रमिक जन तथा समृद्ध महाजन, सामंत और श्रीमंत सभी एक ही भावना से प्रेरित होकर इस पर्व का पारिपालन

मुद्रक, स्वामी, प्रकाशक व सम्पादक : श्रीमती राकेश रानी 2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-110005 से प्रकाशित एवं डीलक्स आफसेट प्रिन्टर्स 308/4 शहजादा बाग दिल्ली से मुद्रित।

करते हैं। फूस और गारे से ग्राम्य अंचलों में बनी कुटियों से भव्य प्रासादों तक में समान रूप से बिखरता उजियारा इस सत्य का साक्षात्कार कराता है कि अन्ततोगत्वा धर्म की विजय वैजयन्ती ही अधर्म पर फहराती है।

युग-युग के अनेक प्रबल प्रभंजनों को चुनौती देकर उन्हें झेलकर यह आर्य भूमि, यह भारत महान-अपना हिन्दुस्थान, इसके कण-कण को पावन और मात्र मातृभूमि एवं पितृभूमि ही नहीं अपितु पुण्यभूमि मानकर इसके प्रति अनुरक्त तथा कृतज्ञ इस राष्ट्र की अस्मिता, महिमा और गरिमा को रक्षित-सुरक्षित तथा अखंड और अविभाज्य रखने हेतु हर प्रकार के त्याग और बलिदान को तत्पर यह हिन्दू राष्ट्र, अपने अनेक भेद-विभेद, मत-मतान्तरों के होते हुए भी विजयोत्सव और दीपोत्सव सरीखो पर्वों का परिपालन कर अन्तःनिहित ऐक्य भाव की अभिव्यक्ति अनादि काल से करता आ रहा है। यह पावन पर्व जहां राष्ट्र की सांझी गौरवमयी विरासत का साक्षात्कार कराता है, वहीं दीपोत्सव हानि-लांभ के लेखे-जोखे के आकलन और विश्लेषण का प्रेरक पर्व भी है। अतएव इस पावन पर्व का सोल्लास परिपालन करते हुए यह विचार किया जाना भी आवश्यक है कि क्या ज्योतिपर्व पर मात्र दीप वर्तिकाएं सजाना और पुरानी खाता-बहियों को समेट नयी बहियों का श्रीगणेश मात्र ही हमारे दायित्व का समारोप है, इतिश्री है।

इस दृष्टि से जब देश की स्थिति-परिस्थिति पर दृष्टिपात करते हैं तो यह स्पष्ट परिलक्षित हो जाता है कि हम कोटि-कोटि माटी के दीपों अथवा विद्युत दीपों की लड़ियां भले ही सजाते आ रहे हों, अभी भी अंधकार की प्रेरक शक्तियां, इस सुजलाम-सुफलाम, शस्य श्यामलाम, वरदाम भूमि के विघटन हेतु साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता, जातीय भेदभाव तथा संकीर्णता व अलगाव की फुफकारों से इस महान राष्ट्र में गहन तम का साम्राज्य फैलाने के लिए निरन्तर सक्रिय हैं। राष्ट्र के मान बिन्दुओं, श्रद्धा और आस्था के केन्द्रों को धूल धूसरित करने के नापाक इरादों से प्रेरित वाह्य और आंतरिक आतंकवादी तत्व आए दिन अपने प्रहारों से इस देवभूमि को आहत करने में संलग्न हैं। राष्ट्र के कर्णधार सत्ता की डोली में, कहारों के सहारे सवार हैं, देश की दशा-दिशा संवारने के लिए कोई ठोस पग उठाने में स्वयं को असमर्थ पा रहे हैं और ये कहार ही-जिनमें से अधिसंख्य के प्रेरणाकेन्द्र इस पुण्यभूमि से बाहर हैं, सत्ता के सूत्रधारों के रथ को पथ से भटकाने में सफल होते प्रतीत हो रहे हैं। वे तत्व जिनके अस्तित्व के रक्षण, संवर्धन और वर्धन हेतु अपने देश ने अपने अनेक जयिष्णु जवानों का बलिदान दिया था, आज भस्मासुरी भूमिका के निर्वहन में संलग्न होकर भारत भूमि को चुनौती देते दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

अतएव दीपमालिका का पर्व मनाने के साथ ही स्वदेश के समक्ष उपस्थित चुनौतियों, खतरों और संकटों पर दृष्टिपात करना भी समय की पुकार है। हर मातृभक्त, हर राष्ट्रभक्त को संकल्प ग्रहण करना होगा उन प्रवृत्तियों के प्रेरकों के प्रति सजगता का जो हमारे राष्ट्र की भाग्यलक्ष्मी को श्रीविहीन करने को अपनी पूरी शक्ति सहित सक्रिय हैं।

स्वराष्ट्र के प्रेरक अतीत से प्रेरणा ग्रहण कर विद्यमान स्थिति का राष्ट्रहित की कसौटी पर तथ्यात्मक आकलन कर इसके समुज्जवल भविष्य की कामना से आप्लावित राष्ट्रभक्त जन सांप्रदायिकता के विष दंत उखाड़ने की भरत भूमिका के निर्वहन का इस प्रेरक पर्व पर संकल्प ग्रहण करें यही है समय की पुकार। संकीर्णता की विष वल्लरी से उद्भूत संकट की गंभीरता से हम अनभिज्ञ नहीं हैं। हमारा तो यह सुस्पष्ट औरसुपरिक्षित तथा सुविचारित मत है कि जिस हिन्दुत्व को आज तथाकथित प्रगति पुरोहित विकृत रूप में प्रस्तुत करने में ऐड़ी चोटी का जोर लगा रहे हैं वस्तुतः उस हिन्दुत्व की व्यापक और सर्व समावेशी चिंतनधारा ही वास्तविक एकता का चिरन्तन स्रोत है। क्योंकि हिन्दुत्व कोई संकीर्ण विचारधारा और कागज पर अंकित रेखाचित्र या कृत्रिम शब्द नहीं अपितु मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और कर्मयोग के प्रतिपादक श्रीकृष्ण के मानव कल्याणकारी तथा विश्व हितकारी दर्शन की अभिव्यंजना है। हिन्दुत्व का दर्शन आसुरी शक्तियों के मान मर्दन और सद् प्रवृत्तियों के संरक्षण का प्रेरक हे। जो अंतिम लक्ष्य के रूप में उसी आदर्श स्थिति को स्वीकारता है, जब मानव मात्र में बंधुत्व भाव का विस्तार होगा। क्योंकि 'वसुधैव कुटुम्बकम' ही तो परमपिता परमात्मा की कल्याणी वाणी वेद का शाश्वत संदेश है। उस कल्पना को साकार करने हेतु यह आवश्यक है कि भारत विश्व के मानचित्र पर एक सशक्त और बलिष्ठ तथा अजेय राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित हो।

ऐसा परिदृश्य तभी उपस्थित हो पाएगा जब अपना देश, अंधकार पर प्रकाश की विजय कामना मात्र से

इस अंक में पढ़ें

(आवश्यक नहीं कि सम्पादक लेखकों की रचनाओं में अभिव्यक्त सभी विचारों से पूर्णतः सहमत हो।)

सम्पादकीय	१
सामयिक विचार	४
महात्मा वेदभिक्षुः की अमरवाणी	५
देवतास्वरूप भाई परमानन्द -*इन्द्रदेव गुलाटी*	७
आपके पत्र	८
शारदीय नव सस्येष्टि दीपावली	९
वैदिक चिन्तन-दुरित दूर करके ऐश्वर्य...-*डॉ. रामनाथ वेदालंकार*	११
वैदिक दर्शन-वैदिक ऋचाओं में पर्यावरण चिन्तन -*पुष्पा पाल*	१२
प्रभु हमें सन्मार्ग पर ले चलो -*प्रो. धर्मवीर*	१५
वैदिक-दर्शन-वेदार्थ को समझ पाने की... -*डॉ. ज्ञानचन्द्र*	१७
युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती -*डॉ. धर्मपाल आर्य*	१९
देश-विदेश में दीपावली पर्व -*रामबिहारी विश्वकर्मा*	२५
दीपोत्सव और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम -*दिव्या आर्य*	२६
आर्यसमाज और देवदयानन्द के स्वप्न -*दयाराम पोद्दार*	२८
महर्षि दयानन्द प्रदत्त प्रकाश स्तम्भ -*कु. कंचन गुप्ता*	३०
असतो मा सद्गमय-..... -*बाबा रामदेव योगाचार्य*	३३
ऐतिहासिक पौराणिक सत्य है रामसेतु -*प्रो. योगेशचन्द्र शर्मा*	३५
टूट रहा राष्ट्रीय एकता का आधार... -*सूर्यदेव चौधरी*	३६
संघर्ष और स्वाभिमान की प्रतिमूर्ति : दीपिकाबाई शिन्दे	३७
महिला-जगत्-पर्व व्यंजन	४१
बाल-जगत्	४२
आर्यसमाज के मूकसाधक-स्व. ला. चतुरसेन गुप्त -*डॉ. धर्मपाल*	४३
दुःख का कारण=अविद्या -*स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक*	४६
लालों के लाल : मॉरिशस पहुंचे थे मणिलाल-*डॉ. श्यामसिंह शशि*	४९
पुस्तक समीक्षा-खोया हुआ कश्मीर	५१
आर्यसमाज हनुमान रोड, नई दिल्ली का वार्षिकोत्सव	५२
समाचार-दर्शन	५४

प्रेरित होगा। उसे साकार करने तथा सत्य की विजय हेतु सहस्त्रों वर्षों से सतत संघर्षरत यह राष्ट्र विद्यमान चुनौतियों पर भी विजय प्राप्त कर लेगा। ये चुनौतियां आज मजहबी उन्मादियों द्वारा परिपोषित साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता, आतंकवाद तथा विदेशी धन-संसाधन के बल पर भारतभूमि को विखंडित करने को आतुर तत्वों के अलावा कतिपय अन्य संकटों के रूप में भी उपस्थित हैं। अलगाववाद के जो बीज विदेशी सत्ताधीशों ने बोए थे, वे अब वृक्षों सा आकार पाते जा रहे हैं। आज देश के समक्ष नैतिकता, मर्यादा और चरित्र क्षरण का जो संकट विद्यमान है उस पर हमें विजय अवश्य ही प्राप्त होगी—क्योंकि सत्य और अन्ततोगत्वा नैतिकता की जीत पर हमारा अदम्य विश्वास है।

साम्प्रदायिकता, संकीर्ण जातिवाद और क्षेत्रीयता तथा राष्ट्रद्रोही प्रवृत्तियों के विषधरों को कुचलने में अपना महान देश सफलता पाएगा ही यह हमारी मान्यता है। दीपोत्सव का पावन पर्व हमारे इस विश्वास को सबल करता है। जब-जब भी इस वरेण्य भूमि पर ऐसे संकटों के सघन घन घहराए हैं, तभी इस महान राष्ट्र की आंतरिक ऊर्जा किसी न किसी युग पुरुष के रूप में प्रस्फुटित हुई है, यह इतिहास सिद्ध तथ्य है। इस देश की धरती पुण्यभूमि तो है ही यह अमृत जननी भी है। यों भी हमारा यह सुचिंतित निष्कर्ष है कि वे सारे संकट मूलतः अप्राकृतिक ही हैं। कुछ वर्ष या दशक भारत सरीखे प्राचीन राष्ट्र के जीवन में कुछ क्षणों से अधिक महत्व नहीं रखते। निश्चय जानिए प्रकाश सत्य के प्रस्फुटन की प्रतीक्षा कर रहा है। यह प्रकाश पर्व आह्वान् कर रहा है कि सत्य के सूर्य को ग्रहण नहीं लगने देने के लिए हम सजग, सतर्क और सावधान होकर उन महापुरुषों के समान अपनी प्राण वर्तिकाएं सजाएं, जिनका दीप पर्व पुण्य स्मरण कराता है। पड़ोस में बैठे शत्रुओं से तो हमें सजग रहना ही है, साथ ही सात समन्दर पार बैठे दंभ और अहंकार के उन शक्तिपुंजों से भी सतर्कता अपेक्षित है जो भारत राष्ट्र की स्वतंत्रता और अखंडता रूपी सीता को छलने वाले स्वर्ण हिरणों के रूप में मारीच टोलियां पठा रहे हैं। उनकी दुरभिसन्धि से भी हर प्रबुद्ध राष्ट्रभक्त को जन-गण को सतर्क कराना होगा। दीपोत्सव पर्व का आह्वान् है कि 'इदन्नमम' के महामंत्र के मर्म को समझ कर हम अपने देह दीप अंधकार हरने हेतु समर्पित करने की सिद्धता को अपने व्यवहार का शृंगार बनाएं। चरैवेति, चरैवेति के वैदिक आह्वान् को हृदयंगम कर हम अपने बलिदानी पूर्वजों द्वारा प्रदर्शित पथ पर बढ़ते रहें। अथर्ववेद के इस आह्वान् को क्रियावित करें—"वयं राष्ट्रे जागृयामः पुरोहिताः"।

हम समय के साथ न बहें अपितु उसे दिशा प्रदान करें—नए सूर्योदय के लिए प्राण-प्रण से संकल्पबद्ध हों जगती तल और अंतरिक्ष तक को ज्योतित करने की हो हमारी साध और वेद के उद्घोष को अपने मानस मंदिर में धर कर हम करें यह उच्चार—"तमसो मा ज्योतिर्गमय।" ०-०-०

राहत राशि में धांधली

यह अकल्पनीय है कि एक सार्वजनिक उपक्रम की प्रतिष्ठित और बड़ी कम्पनी ने आपदाग्रस्त लोगों की राहत के नाम पर जो धनराशि एकत्रित की वह प्रधानमंत्री राहत कोष तक पहुंची ही नहीं। नि:संदेह यह भी अकल्पनीय है कि प्रधानमंत्री कार्यालय ने इसकी कोई खोज-खबर लेना जरूरी नहीं समझा कि उसे देय राशि उस तक क्यों नहीं पहुंची? यह सरकारी तंत्र की अव्यवस्था, उदासीनता के साथ-साथ हद दर्जे की संवेदनहीनता का भी प्रमाण है। जब सुनामी और गुजरात भूकम्प जैसी राष्ट्रीय आपदाओं के मामले में ऐसी संवेदनहीनता दिखाई जा सकती है तो फिर यह सहज ही कल्पना की जा सकती है कि सामान्य आपदाओं के पीड़ितों की कितनी उपेक्षा की जाती होगी? यह तो कोई सोच भी नहीं सकता कि आपदाग्रस्त लोगों के लिए एकत्रित राहत राशि इधर-उधर कर दी जाए। दुर्भाग्य से इस मामले में ऐसा ही हुआ। आखिर अब किस भरोसे से प्रधानमंत्री राहत कोष के लिए सरकारी कम्पनियां धन एकत्रित कर सकेंगी? इस मामले के सामने आने के बाद आम आदमी की ओर से यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि आपदाग्रस्त लोगों को प्रधानमंत्री राहतकोष के जरिए राहत राशि क्यों प्रदान की जाए? आपदाओं पर एकत्रित धनराशि में गड़बड़ी कर सार्वजनिक क्षेत्र की कोयला कंपनी साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड लि. ने जिस तरह आम जनता के भरोसे को तोड़ने का कार्य किया उससे उसमें और गली-मोहल्ले में लोगों की संवेदनाओं को भुनाकर चंदा एकत्रित करने वालों में क्या अंतर रह गया है?

यह स्वाभाविक है कि इस प्रकरण के उजागर होने के बाद जांच-पड़ताल की कोई घोषणा हो सकती है अथवा कोई स्पष्टीकरण सामने आ सकता है, लेकिन इस सबसे उस क्षति की भरपाई हो पाना मुश्किल है जो क्षति प्रधानमंत्री कार्यालय के प्रति अविश्वास के रूप में उभरी है। आम धारणा यह है कि प्रधानमंत्री राहत कोष को प्रदान की जाने वाली धनराशि देर-सवेर पीड़ितों और वंचितों तक पहुंचती ही है। इस मामले में कोयला कम्पनी और प्रधानमंत्री कार्यालय के स्तर पर चाहे जो कुछ कहा जाए, लेकिन उस भरोसे को लौटा पाना कठिन होगा जो प्रधानमंत्री कार्यालय के प्रति बना हुआ था। कोई आश्चर्य नहीं कि यह मामला बड़े भ्रष्टाचार के रूप में सामने आए। इस प्रकरण ने यह संदेह उत्पन्न कर दिया है कि ऐसे ही अन्य अनेक मामले भी हो सकते हैं। दरअसल अब विगत वर्षों में प्रधानमंत्री राहत कोष को देय राशि की गहन छानबीन की जरूरत है। यह प्रकरण इस जरूरत को भी रेखांकित कर रहा है कि प्रधानमंत्री राहत कोष में जमा कराई जाने वाली राहत राशि के सन्दर्भ में न केवल कोई पारदर्शी व्यवस्था बनाई जानी चाहिए, बल्कि ऐसे प्रभावशाली तंत्र के निर्माण की पहल भी की जानी चाहिए जिससे आपदा से प्रभावित लोगों को समय पर और पूरी राहत राशि मिल सके। यह इसलिए और अधिक आवश्यक है, क्योंकि जैसी गड़बड़ी कोयला कम्पनी द्वारा एकत्रित राशि के मामले में सामने आई वैसा ही अन्य अनेक मामलों में भी हो चुका है। यदि इस तरह की गड़बड़ियां रोकने के अब भी कोई ठोस और कारगर उपाय नहीं किए जाते हैं तो इसका यही अर्थ होगा राहत राशि में लूट-खसोट के अवसर प्रदान करते रहना।

(दैनिक जागरण, २४ अक्टूबर २००७ से साभार)

दीपोत्सव पर 'दयानंद संस्थान' एवं 'जनज्ञान' की ओर से शुभकामनाएँ

दीप ज्योति सा उज्ज्वल हो समूचा वर्ष, दीप की माटी से पावन हों बारह मास, दीप की बाती से कोमल हों ५२ सप्ताह, दीप सा उजियारा लिए हों ३६५ दिवस, दीप सा स्वभाव लिए सर्वप्रिय बनें ८७६० घंटे, दीप सी संघर्ष क्षमता से परिपूर्ण रहें ५,२५,६०० मिनट, दीप सा झिलमिलाता आनन्द उत्साह हृदय में प्रत्येक सेकिंड रमता रहे, सुखी यशस्वी जीवन के धनी बनें।

महात्मा वेदभिक्षुः की अमर वाणी

दीप जलाओ और ऋषि दयानन्द को जीवित करो

अंधेरा बहुत गहरा हो चुका है, प्रकाश कहीं दिखायी नहीं देता, मैं ज्योति की एक किरण देखने के लिए उत्सुक हूं, किन्तु गहन तमस् में शून्य के अतिरिक्त और कुछ भी तो प्रतीत नहीं हो रहा।

तुम दीपमाला मनाओगे, अपना घर-आंगन दीप पंक्तियों से सजाओगे, फुलझड़ियां तुम्हारे मन में उभरेंगी पर मेरा हृदय तो इन सबमें वह नहीं देख पा रहा जिसे देखने के लिए वह व्याकुल है।

आज गुरुदेव दयानन्द का बलिदान दिवस है। पाचक जगन्नाथ ने घातक बन मेरे गुरु के देह को समाप्त करने का अपराध किया था। उस दिन भी दीवाली थी। किन्तु भौतिक शरीर के त्यागने के बाद भी ऋषि दयानन्द मर नहीं सके। वे जीवित रहे नाना रूपों में, गुरुदत्त, लेखराम, श्रद्धानन्द और बलिदानी शहीदों के रूप में आर्य भाई-बहनों की श्रद्धा में, उत्साह के ठाठें मारते जोश में। मेरा मन नहीं मानता कि दीवाली के दिन 1983 में ऋषि दयानन्द नहीं रहे।

मैं अपनी आंखों से प्रत्येक दयानन्द भक्त को ऋषि दयानन्द की छाया-प्रतीक रूप में देखता हूं। जहां ऋषि के प्रति श्रद्धा है वहां मेरा गुरु जीवित है। इसलिए मैं कहता हूं कि ऋषि दयानन्द को सर्वत्र जीवित करो।

मेरा गुरु दयानन्द साधारण नहीं, अनुपम था, वह वह ही था, उसका एक-एक गुण उसकी महत्ता का परिचायक है। वह मनुष्य-मात्र का उद्धारक सचमुच देवता था, ऐसा देवता जिसने सब कुछ दिया, और बदले में पिये विष के प्याले। पर विष के प्याले पीकर भी वह अमर हो गया, उसे कोई मार नहीं सका, वह अजेय था।

पर आज कभी-कभी अनुभव होता है कि मेरे गुरु की हत्या हो गई है। अन्तर्मन पूछता है कि किसने मारा दयानन्द को, उत्तर मिलता है "दयानन्द की जय" बोलने वालों ने। उन्होंने जो दयानन्द का नाम लेकर नेता बने, ऋषि दयानन्द की हत्या करने का यत्न किया है।

ये बड़े-बड़े भव्य भवन, ये विशाल संगठन, ये लच्छेदार भाषण देने वाले नेता मेरे गुरु के हत्यारे हैं। यह बात लिखते हुए मुझे कितनी पीड़ा होती है, कौन समझेगा? किसके पास श्रद्धा है, किसके पास हृदय है जो मेरे दर्द का अनुभव कर सके।

कचहरियों और समाचारपत्रों में लड़कर दयानन्द का नाम लेने वाले इन दयानन्द-भक्तों (?) को आप भले ही क्षमा कर दें किन्तु इतिहास क्षमा नहीं करेगा। नारे लगा कर, झूठे आन्दोलन चलाकर, जनता को सब्जबाग दिखाकर इन्होंने ऋषिभक्तों को ठगने के अतिरिक्त आज तक क्या किया है? क्या कर रहे हैं? ये आज आर्यसमाज के लिए, ऋषि दयानन्द के लिए? कौन पूछे कौन उत्तर दे, जब सभी भटक रहे हैं।

दयानन्द के लाखों अनुयायी आज भी जीवित हैं, जनमानस में ऋषि के प्रति श्रद्धा का सागर आज भी विद्यमान है। आशा की किरण यही है, और इन्हीं से मेरा मन कहना चाहता है कि दीवाली के दिन ऋषि दयानन्द को पुनः जीवित करो।

ग्राम-ग्राम और गली-गली में दयानन्द के गीत गुंजाने का प्रयत्न करो। अपनी शक्ति अपने क्षेत्र में केन्द्रित करो और ऋषि दयानन्द का प्रकाश फैलाने में लग जाओ। सत्यार्थप्रकाश, ऋषि जीवन और वेद हमारे अस्त्र बनें। इनके द्वारा हम विजय करें, ज्योति बिखेरें।

मैं चाहता हूं कि सारा आर्यसमाज अब केवल एक आन्दोलन चलाये-"वेद-प्रचार-आन्दोलन"। हम सब कुछ भूल जायें और याद करें वेद को। उस वेद को, जिसे हम अपना धर्म-ग्रन्थ मानते हैं।

हमें बढ़ना है, जीवन के अन्तिम क्षण तक और चलते जाना है, जीवन में हम वह दिन देख सकेंगे जब सर्वत्र ऋषि दयानन्द की जय-जयकार सुनाई देगी।

निराशा की इन घड़ियों को आशा-प्रकाश ज्योतित करने हेतु दीप जलाओ ऋषि भक्तो! दीपावली के दिन आत्म निरीक्षण कर हृदय मंदिर को पवित्र कर वहां 'ज्ञान-दीप' ज्योतित करो। मन और मस्तिष्क का अंधेरा भगाने के लिए दीपावली से अधिक पवित्र दिन और कौन-सा होगा? आर्यसमाज के भवनों को ऋषि की भावना और वेद-ज्योति से जगमगाओ। श्रद्धा की प्रेरणा और प्रभु का प्रकाश हमारे धर्मस्थान में तेज पुंज बन कर प्रकटे। हमारा जीवन देख अन्यों को प्रकाश मिले। अपने कर्म से धर्म को जीवित करो। अपने प्राण से ज्ञान को गति दो। एक बार सारे ढांचे को दयानन्दमय कर दो। फिर देखो, इस धरती से अंधेरा कैसे भागता है? घातक जगन्नाथ के साथी मत बनो! मेरे भाई, याद करो वह दीवाली की शाम, जब गुरुदेव दयानन्द ने अपने प्राण छोड़ते हुए तुम्हें प्रभु इच्छा पूर्ण करने का आदेश दिया था। तुम उस दृश्य को मन की आंखों से देखो। देखो तो सही, आज भी तुम्हें ऋषि का सन्देश गूंजता सुनाई देगा। **प्रभु आज्ञा का पालन करो। प्रभु के मार्ग पर चलो!**

सभी को चलाओ! वेद-ज्ञान प्रकाश फैलाओ!

यदि आत्मा की पुकार में बल है, यदि ऋषि दयानन्द नाम है उस देवता का जो सत्य का प्रतीक है तो उसे-मेरे गुरु को, कोई मार नहीं सकता। न जगन्नाथ पाचक, न नेता। देव दयानन्द अमर है, उनकी अमरता उनके सन्देश प्रसार में निहित है।

दीवाली के दिन मैं तुमसे दयानन्द का सन्देश फैलाने का व्रत लेने की प्रार्थना कर रहा हूं। मैं तुमसे याचना कर रहा हूं सारे द्वेष-भाव समाप्त करने की। मैं तुम्हें पुकार रहा हूं दयानन्द का प्रकाश फैलाने के लिए। आप घर में दीपक जलाते हुए यह न भूलें कि धरती पर अभी बहुत अन्धेरा है। यह अन्धेरा मिटाने और ज्ञान-दीप जलाने के लिए जो भी कर सकते हो, कीजिए।

दयानन्द का काम पूरा करने का,
दयानन्द के दिखाये मार्ग पर चलने का,
'वेद' प्रकाश सर्वत्र फैलाने का व्रत लेकर
ऋषि दयानन्द को जीवित कीजिये।

(जनज्ञान कार्तिक सम्वत् १९४१)

दयानंद संस्थान सहयोग मंडल अध्यक्ष–विख्यात साहित्यकार व समाजशास्त्री डॉ. शशि की मॉरिशस यात्रा

बाएं से दाएं श्री मोहित, डा. एस. नीबूर प्रीतम जी, मॉरिशस के राष्ट्रपति श्री अनिरुद्ध जगन्नाथ व डा. श्यामसिंह 'शशि'

नई दिल्ली : मॉरिशस में एक सप्ताह के प्रवास से लौटे वरिष्ठ साहित्यकार तथा समाजशास्त्री संरक्षक दयानंद संस्थान सहयोग मण्डल के अध्यक्ष पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि भारत के अकेले स्टेट गेस्ट स्कॉलर थे जिन्होंने डॉ. मणिलाल शताब्दी के सिलसिले में मॉरिशस में आयोजित समारोह के उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में भाग लिया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि स्वतंत्रता सेनानी मणिलाल डाक्टर ने मॉरिशस के अतिरिक्त फीजी, दक्षिण अफ्रीका, सुमालिया आदि देशों में भी भारतवंशियों पर किए जा रहे जुल्मों के खिलाफ आवाज उठाई थी। अत: पेशे से बैरिस्टर होते हुए भी उन्हें अंग्रेज शासकों ने हाई कोर्ट में वकालत नहीं करने दी। उनके पिता डाक्टर थे अत: यह शब्द उनके नाम के साथ भी जुड़ गया था। डॉ. मणिलाल १३ अक्टूबर १९०७ को भारतवंशियों की सहायतार्थ मॉरिशस गए थे। डॉ. शशि ने मॉरिशस विश्वविद्यालय में मणिलाल चेयर स्थापित करने का प्रस्ताव रखा, जिस पर समारोह में उपस्थित वहां के उप-प्रधानमंत्री डॉ. अहमद राशिद, बीबीजॉन ने यथाशीघ्र कार्यवाई करने का भरोसा दिलाया।

अन्य वक्ताओं में प्रमुख थे–भारतीय दूतावास के उच्चायुक्त बी. जयशंकर, मॉरिशस सरकार के कला तथा संस्कृति विभाग-मंत्री महेन गौरेसू, पर्यावरण मंत्री अनिल कुमार बेचू, शिक्षा तथा मानव संसाधन विकास-मंत्री धर्मबीर गोकुल, राष्ट्रीय समारोह समिति के अध्यक्ष डॉ. रुद्रसेन नीवूर, आर्यसभा के अध्यक्ष राजाराम गत्ती तथा शिक्षाविद् डॉ. उदयनारायण गंगू, आनन्द मल्लू, सत्यदेव प्रीतम, डॉ. उषा शर्मा आदि। समारोह में विश्व हिन्दी सम्मेलन सचिवालय की महासचिव डॉ. विनोद बाला अरुण तथा परमानन्द जीराकुन, आचार्य सुनील, रघुनाथ दील सहित मॉरिशस के अनेक बुद्धिजीवी, शिक्षाविद्, लेखक तथा धार्मिक संगठनों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। बाद में डॉ. शशि मॉरिशस गणराज्य के राष्ट्रपति डॉ. अनिरुद्ध जगन्नाथ से उनके निवास पर मिले तथा भारतवंशी, प्रवासी एवं रोमा लेखकों के साहित्य को मॉरिशस के पाठकों से अवगत कराने के लिए उन्हें सुझाव दिए। साथ ही, मॉरिशस विश्वविद्यालय में मणिलाल पीठ को यथाशीघ्र स्थापित कराने पर भी बल दिया। उल्लेखनीय है कि मणिलाल डाक्टर ने मॉरिशस के पोर्ट लुईस नगर में आर्य समाज की स्थापना कराई थी। डॉ. शशि ने मॉरिशस के राष्ट्रीय समारोहों के अतिरिक्त आर्य सभा तथा अन्य संस्थाओं द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में भारत का प्रतिनिधित्व किया।

डॉ. शशि ने विभिन्न कार्यक्रमों में दयानन्द संस्थान और जन-ज्ञान मासिक द्वारा वेद प्रचार अभियान में विश्व व्यापी स्तर पर दिए जा रहे योगदान का भी उल्लेख किया।

वर चाहिए

राजपूत चौहान 28 वर्षीय, कद 5'-8'', डी.पी.एस. से प्रथम श्रेणी प्राप्त, दिल्ली विश्वविद्यालय से बी.एससी (स्टेटिक्स हॉनर्स), टॉपर, एम.सी.ए., बहुराष्ट्रीय कम्पनी में सहायक प्रबन्धक के पद पर कार्यरत सुन्दर, सुशील कन्या के लिये वर चाहिये। सम्पर्क करें : फोन : 0120-2515083 अथवा ईमेल से बी/पी भेजें। ई-मेल पता : bin_1980@rediffmail.com

४ नवम्बर जिनकी जयंती है

देवता स्वरूप भाई परमानन्द

देवता स्वरूप भाई परमानन्द उन तीन राष्ट्रीय स्तर के नेताओं में थे जिन्होंने १९१५ में हरिद्वार में प्रान्तीय स्तर की हिन्दू महासभा को अखिल भारतीय स्वरूप दिलाया था।

* आपने अपनी सारी सम्पत्ति बेचकर अखिल भारतीय हिन्दू महासभा का केन्द्रीय कार्यालय मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली में बनवाया।
* आप हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष भी रहे।
* आप १९३५ में हिन्दू महासभा की ओर से केन्द्रीय असेम्बली के सदस्य बने।
* आपके अनुरोध पर ही स्वातन्त्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर १९३७ में हिन्दू महासभा में आए।
* १९४६ के निर्वाचन में भाई परमानन्द ने वीर सावरकर का डटकर और खुलकर साथ दिया था जबकि संघ के उन स्वयंसेवकों के नाम वापिस करा दिए गए थे जो हिन्दू महासभा के टिकट पर खड़े हो रहे थे।
* यदि हिन्दुओं ने भाई परमानन्द का साथ दिया होता तो पाकिस्तान का आकार छोटा होता।
* आप कांग्रेस में भी रहे। किन्तु कुछ ही दिनों में कांग्रेसी नेताओं की तुष्टीकरण नीति से उनका खुला मतभेद हो गया।
* आपने कई पुस्तकें लिखी थीं। पूर्वी अफ्रीका में आर्य समाज का प्रचार किया व कई देशों में हिन्दू धर्म की महत्ता पर प्रभावशाली भाषण दिए।
* आपने कहा था कि प्रजातन्त्र में संख्या बल सबसे बड़ा निर्णायक बल है।
* आप अन्तर्जातीय विवाह के प्रबल समर्थक थे। आपने जात-पांत तोड़क मण्डल की स्थापना भी की थी।
* भाई जी को देवता स्वरूप कहा जाने लगा था। उनकी स्मृति को चिरस्थायी करने के लिए देवता स्वरूप भाई परमानन्द हिन्दू एकता पुरस्कार वीर सावरकर विचार मंच बुलन्दशहर द्वारा २००५ में शुरू किया गया था। यह पुरस्कार अन्तर्जातीय विवाह करने वाले दम्पती को दिया जाता है। १८ नवम्बर २००७ को तीसरा पुरस्कार दिया जाएगा।

–इन्द्रदेव गुलाटी, संस्थापक,
सावरकर विचार मंच, बुलन्दशहर

आपके - पत्र

वैश्वीकरण का यह दौर

आदरणीया, वैश्वीकरण का है यह दौर-इससे हम भी बेशक बाजारवाद की होड़ में शामिल हो गए हैं। किन्तु अगर यह जानने को प्रयास किया जाए कि इससे देश के कौन-कौन से वर्ग लाभान्वित हुए हैं तो यह हस्बीकत हमारे सामने आ जाएगी कि इसका लाभ विपुल धनपतियों और उद्योगपतियों को ही है। सामान्य जन का तो मात्र शोषण ही हुआ है। देश में खूब रहे हैं बड़े-बड़े मॉल, जिनकी मार आम जनता और छोटे व्यापारियों पर ही पड़ रही है। अनेक हैं जिनका जीना दूभर हो गया है। क्या कोई भी निष्पक्ष व्यक्ति इस हकीकत से इन्कार कर सकता है कि आज भी आधे से ज्यादा अपने देश में ऐसे इन्सान हैं, जिनके लिए दो वक्त की रोटी का जुगाड़ भी एक पहाड़ जैसी समस्या है। आखिर जिस प्रगति के डंके पीटे जा रहे हैं, उस से कौन लाभान्वित हुआ है, इस पर भी तो गंभीर विचार की दरकार है।

-मिश्रीलाल, भीलवाड़ा (राज.)

सेतु समुद्रम समिति : कई सवाल

महोदया, राम सेतु और मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के अस्तित्व को ही चुनौती दिए जाने पर आम जनता में भारी आक्रोश फूटा तो सरकार ने सेतु समुद्रम परियोजना की समीक्षा के नाम पर एक समिति का गठन कर दिया। मगर इस समिति के सदस्यों में ऐसे लोगों की भरमार है, जो या तो सामपंथी हैं या, जिन्हें ईश्वर के अस्तित्व से ही इन्कार है अथवा जो सरकारी धन से लाभ उठा रहे हैं। अतः यह प्रश्न स्वाभाविक तौर पर उठता है कि क्या ये स्वतन्त्र समीक्षा कर पाएंगे। समिति के संयोजक मद्रास विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. एम. रामचन्द्रन हैं, जो सेतु समुद्रम प्रकल्प की पर्यावरणीय प्रभाव पर गठित संचालन समिति के अध्यक्ष भी हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय के बहुचर्चित कम्युनिस्ट प्रोफेसर आर.एस. शर्मा भी इस समिति के सदस्य हैं। इसके अन्य सदस्यों में से पांच ऐसे हैं जो पहले से ही सरकार द्वारा सेतु समुद्रम परियोजना के सन्दर्भ में गठित पर्यावरण जांच समिति के सदस्य रह चुके हैं और सरकार से खासा पारिश्रमिक पा चुके हैं। इसके सचिव आई.एस.एस. अधिकारी श्री आर.के. जैन हैं, जो इंडियन पोर्ट्स एसोसिएशन सोसायटी के निदेशक हैं, जो सीधे-सीधे नौवहन मंत्रालय के अधीन हैं, जिसके मंत्री टी.आर. बालू हैं। इन तथ्यों पर ध्यान देने से यह सवाल मन में आए बिना नहीं रह पाता कि ये सज्जन कितनी निष्पक्ष जांच करेंगे।

-विजेन्द्र सिंघल, गुड़गांव (हरियाणा)

हिन्दी की ये दुर्दशा

माननीया, ऐसा लगता है कि हिन्दी की दुर्दशा के लिए ये अंग्रेजी समर्थक उतने जिम्मेवार नहीं हैं, जितने कि वे सज्जन हैं, जो मंचों से हिन्दी की दुर्दशा पर आंसू बहाते हैं। हिन्दी के लिए संघर्ष करने की जिन पर जिम्मेदारी है, ऐसे साहित्यकार, पत्रकार और नेता कहे जाने वाले लोग अपने खुद के पतन-पाठन ही नहीं सामान्य वार्तालाप भी अंग्रेजी का इस्तेमाल करने में अपनी शान मानते हैं। हिन्दी समाचार पत्रों में भी जिस भाषा का चलन आम हो.ा जा रहा है, उसमें भी ऐसे अंग्रेजी शब्दों को ठूंसा जा रहा है, जो हिन्दी के रूप को ही बिगाड़ रहे हैं।

-सहदेव शास्त्री, दिल्ली

जनज्ञान प्रेरक पत्रिका

सम्मानीया, 'जनज्ञान' मासिक की डाक से प्राप्ति की मुझे ही नहीं, हमारे अनेक सहयोगियों को भी प्रतीक्षा रहती है। पत्रिका प्राप्त होते ही सर्वप्रथम सम्पादकीय को आद्योपांत पढ़ने का लोभ संवरण नहीं हो पाता। क्योंकि आपके द्वारा प्रस्तुत संपादकीय सम सामयिक विषयों पर सटीक टिप्पणियों से युक्त तो होती है, साथ ही समस्याओं का ठोस समाधान भी। शेष समाग्री भी प्रेरक और पठनीय होती है। आज के युग में जब पत्रकारिता एक विशुद्ध व्यवसाय बनती जा रही है, 'जनज्ञान' एक उद्देश्यपूर्ण पत्रिका है और विशुद्ध तर्कसंगत हिन्दुत्व तथा वैदिक चिन्तन-दर्शन का प्रचारक-प्रसारक 'जनज्ञान' वेद प्रचार-प्रसार अभियान को बल प्रदान करने को में समय की पुकार मानता हूँ।

-हिजॉल चट्टोपाध्याय, १६२, विपिन बिहारी गांगुली स्ट्रीट, कोलकाता

आतंकवादियों के मददगारों की हो तलाश

संपादिका जी, अभी गत दिवस एक प्रमुख दैनिक में आतंकवाद की समस्या पर भारतीय सुरक्षा सलाकार परिषद के सदस्य रहे श्री अफसर करीम का एक लेख पढ़ने का अवसर मिला। इस लेख में सीमावर्ती राज्यों में आतंकवाद के सौदागरों द्वारा पांव पसारने का सविस्तार वर्णन है। साथ ही उन्होंने इस समस्या से निपटने के लिए ठोस उपाय सुझाए हैं, उनमें से मेरी दृष्टि में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि पुलिस को योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ते हुए स्थानीय स्तर पर उनकी मदद करने वालों का पता लगाना चाहिए। महज शक के आधार पर कुछ लोगों को पकड़ लेने और अगले विस्फोट का इन्तजार से काम चलने वाला नहीं है। क्या सत्ता के सूत्रधार इस परामर्शानुसार व्यवहार करेंगे?

संदीप, नासिक (महाराष्ट्र)

शारदीय नव सस्येष्टि दीपावली

श्रीमद्दयानन्द निर्वाण कार्तिक वदि अमावस्या

पद्धति

कार्तिकी अमावस्या के दिन प्रातःकाल सामान्य पर्व पद्धति में प्रदर्शित प्रकारानुसार यज्ञशाला वा आवासगृह के तल का गोमय से पुनः लेपन करके स्वदेशीय नवीन शुद्ध वस्त्र परिधानपूर्वक सामान्य होम करके निम्नलिखित मन्त्रों से स्थालीपाक से ३८ विशेष आहुतियां दी जायें। स्थालीपाक नवागत श्रावणी शस्य के अन्न से बनाया गया पायस (खीर) हो। हवन के अन्य साकल्य में लाजा (नवीन धानों की खील) विशेषतः मिलाई जाय।

१. परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवामि मा नः प्रजां रीरिषोमोत वीरान् स्वाहा।।

२. मृत्योः पदं योपयन्तो यदैव द्राघीय आयुः प्रतरं दधाना। आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः स्वाहा।

३. इमे जीवा विमृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य। प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः स्वाहा।

४. इमे जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम्। शतं जीवन्तु शरदः पुरुचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन स्वाहा।

५. यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथा ऋतवः ऋतुभिर्यनित साधु। यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कपयैषाम् स्वाहा। ऋ० मं० १०/सू०१८/मं०१-५

६. आयुष्मतामायुष्कृतां प्राणेन जीव मा मृथाः। व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा स्वाहा।

अथ० का० ३, सू० ३१, मं० ८

७. ब्रह्मचर्य्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। इन्द्रो ह ब्रह्मचर्य्येण देवेभ्यः स्वराभरत् स्वाहा।

अ० का० ११, सू० ५, मं० १९

८. शतायुधाय शतवीर्याय शतोतयेभिमातिषाहे। शतं यो नः शरदो अजीजादिन्द्रो नेषदति दुरितानि विश्वास स्वाहा।

९. ये चत्वारः पथयो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी वियन्ति। तेषां यो आ ज्यानिमजीजिमावहास्तस्मै नो देवाः परिदत्तेह सर्वे स्वाहा।

१०. ग्रीष्मो हेमन्त उत नो वसन्तः शरद्वर्षाः सुवितन्नो अस्तु। तेषामृतूनाꣳशतशारदानां निवात एषामभये स्याम स्वाहा।

११. इद्वत्सराय परिवत्सराय संवत्सराय कृणुता बृहन्नमः। तेषां वयꣳसुमतौ यज्ञियानां ज्योग् जीता अहताः स्याम स्वाहा।

(म० ब्रा० २/१९-१२) गोभिलीय गृह्यसूत्र, प्रपाठक ३, खण्ड ७, सूत्र १०-११

१२. ओं पृथिवी द्यौः प्रदिशो यस्मै द्युभिरावृताः। तमिहेन्द्रमुपह्वये शिवा नः सन्तु हेतयः स्वाहा।।

१३. ओं यन्मे किंचिदुपेप्सितमस्मिन् कर्मणि वृत्रहन्। तन्मे सर्वꣳसमृध्यतां जीवतः शरदः शतम् स्वाहा।

१४. सम्पत्तिभूतिर्भूमर्वृष्टिर्ज्यैष्ठ्यꣳश्रैष्ठ्यꣳश्रीः प्रजामिहावतु स्वाहा। इदमिन्द्राय-इदन्न मम।

१५. ओं यस्मा भावे वैदिकलौकिकानां भूमिर्भवति कर्मणाम्। इन्द्रपत्नीमुपह्वये सीताꣳसा मे त्वनपायिनी भूयात्कर्मणि कर्मणि स्वाहा। इदमिन्द्रपत्न्यै- इदन्न मम।

१६. ओं अश्वावती गोमती सूनृतावती बिभर्ति या प्राणभतो अतन्द्रिता। खलामालिनीमुर्वरामस्मिन् कर्मण्युपह्वये ध्रुवाꣳसा मे त्वनपायिनी भूतात् स्वाहा। इदं सीतायै-इदन्न मम।

१७. ओं सीतायै स्वाहा।

१८. ओं प्रजायै स्वाहा।

१९. ओं शमौय स्वाहा।

२०. ओं भूत्यै स्वाहा।

(ये मन्त्र संस्कार विधि से लिए गये हैं।)

२१. ओं व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुदगाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गावश्च मेऽणवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् स्वाहा।

यजु० अध्या० १८, मं० १२

२२. ओं वाजो नः सप्त प्रदिशश्चतस्रो वा परावतः। वाजों नो विश्वर्देवैर्धनसाताविहावतु स्वाहा।

२३. ओं वाजो नो अद्य प्रसुवाति दानं वाजो

देवां २ ऋतुभिः कल्पयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं जजान विश्वा आशा वाजपतिर्जयेयम् स्वाहा।

२४. ओं वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्द्धयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वा आशा वाजयतिर्भवेयम स्वाहा।

यजुर्वेद, अध्याय १८, मन्त्र ३२, ३३, ३४

२५. ओं सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्। धीरा देवेषु सुम्नयौ स्वाहा।

२६. ओं युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ बपतेह बीजम्। विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नोनेदीय इत्सृण्यः पक्वमा यवन् स्वाहा।

२७. ओं लाङ्गलं पवीरवत्सुशीमं सोमसत्सरु। उद्दिद्वपतु गार्मांव प्रस्थावद्रथवाहनं पीबरीं च प्रफुर्न्यम् स्वाहा।

२८. ओं इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूषाभिरक्षतु। सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् स्वाहा।

२९. ओं शनुं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनुयन्तु वाहान्। शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै स्वाहा।

३०. ओं शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वरत्रा बध्यन्तां शनमष्ट्रामुदिङ्गय स्वाहा।

३१. ओं शुनासीरेह स्म मे जुषेथाम्। यद्दिवि चक्रथुः पयस्तेनेमामुप सिञ्चतम् स्वाहा।

अथर्व० कां० ३, सू० १७, मं० १-७

३२. ओं सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव। यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः स्वाहा।

३३. ओं घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः। सा नः सीते पयसाभ्यावृत्स्वोर्जस्वती घृतवत्पिन्वमाना स्वाहा।

अथर्व० कां० ३, सू० १७, मं० ८-९

३४. ओं इन्द्राग्निभ्यां स्वाहा। इदमिन्द्राग्निभ्याम्-इदन्न मम।

३५. ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा। इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यः इदन्न मम।

३६. ओं द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा। इदं द्यावापृथिवीभ्याम् इदन्न मम।

३७. ओं स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणीहि विश्वांश्च देवः पृतना अभिष्णक्। सुगन्नु पन्थां प्रदिशन्न एहि ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुः स्वाहा।

३८. ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्तसमर्द्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते-इदन्न मम।

पूर्णाहुति के पश्चात् खीलों और मिष्टान्न के (बताशे आदि) हुतशेष को यज्ञमण्डप में उपस्थित जनों में वितरण करके भक्षण किया जाय। ०-०-०

कुछ दीपक उनके भी नाम

–सारस्वत मोहन मनीषी

कुछ दीपक उनके भी नाम, कुछ दीपक उनके भी नाम।
बने नींव की ईंट, खड़ा है जिन पर अपना राष्ट्र तमाम।।1।।
जिनको भूल गई आजादी महलों में आ जाते ही।
जैसे भूल जाए पीहर को, दुलहन पति को पाते ही।
या फिर कोई ठुकरा दे सीढ़ी को, ऊपर जाते ही।
कोई छेद करे थाली में, खाना खाते-खाते ही।
जिन पर आधारित अपनी आजादी का ये भवन ललाम।
कुछ दीपक इनके भी नाम, कुछ दीपक उनके भी नाम।।2।।
इतिहासों ने भुला दिया जिनको ऐसी बेशर्मी से।
जैसे शबनम झुलसे, फिर मर जाए थोड़ी गर्मी से।
महाकाव्य अपमानित हो, कुछ शब्दों की हठधर्मी से।
मां का माथा नीचा हो जैसे निज पुत्र कुकर्मी से।
कभी कामना की न सुयशकी मरे देश हित वीर अनाम।
कुछ दीपक इनके भी नाम, कुछ दीपक उनके भी नाम।।3।।
अपनी पत्नी की मांगों में रोली नहीं राख भर दी।
जिन बेटों ने भारत मां की ऊंची बहुत साख कर दी।
किस-किस का लें नाम, नहीं सारे गिनती में आते हैं।
कोशिश कर ली खूब मगर बाकी फिर भी रह जाते हैं।
जो निष्कासित हुए 'मनीषी' वे सब थे इस युग के राम।
कुछ दीपक इनके भी नाम, कुछ दीपक उनके भी नाम।।4।।
आजादी केवल न मिली चर्खे, तकली खादी से।
प्राप्त किया है इसे प्राण देने की खुली मुनादी से।
आंख मिलाई कातिल से हंसकर, मुस्काकर खंजर से।
स्वतन्त्रता का झरना फूटा, कई सदी के बंजर से।
भारत को जिन बेटों ने होने नहीं दिया नीलाम।
कुछ दीपक इनके भी नाम, कुछ दीपक उनके भी नाम।।5।।

वैदिक-चिन्तन

दुरित दूर करके ऐश्वर्य प्रदान कीजिए

❑ डॉ. रामनाथ वेदालंकार

अति निहो अति सृधो, अत्यचित्तीरति द्विषः।
विश्वा ह्यग्ने दुरिता तर त्वम्, अथास्मभ्यं सहवीरं रयिं दा। अथर्व. २.६.५

ऋषि : शौनकः सम्पत्कामः। देवता अग्निः। छन्दः बृहती व्यूहेन पंक्तिः वा।

(अग्ने) हे परमात्मन्! (निहः) निहन्ता विषय-जन्य दोषों को अथवा निकृष्ट योनियों में गति को (अति तर) दूर कर, (सृधः) शोषक कामादि विकारों अथवा दैहिक रोगों को (अति) दूर कर, (अचित्तीः) अज्ञान-वृत्तियों एवं अजागरुकताओं को (अति) दूर कर, (द्विषः)–द्वेष वृत्तियों को (अति) दूर कर। (त्वम्) तू (विश्वा) समस्त (दुरिता) दुराचरणों एवं पापों को (तर) दूर कर। (अथ) और (सहवीर) वीरों सहित (अस्मभ्यं) हमें (रयिं) ऐश्वर्य (दाः) प्रदान कर।

हे दुर्गुणों को दूर करने वाले तेजस्वी परमात्मन्! हम आपकी शरण में आकर आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप हमारे अन्दर आई हुई समस्त बुराईयों को दूर कर हमें निर्मल कर दीजिए। हम विषयभोग जन्य दोषों में फंस गये हैं, जो दोष हमें विनष्ट किए डाल रहे हैं। उनसे आप हमारा उद्धार कीजिए। हम असत्कर्मों में व्याप्त हो जाते हैं, जिनके परिणाम स्वरूप ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार फलभोग के लिए पशु-पक्षी आदि की निकृष्ट योनियों में हमारा जन्म लेना अनिवार्य हो जाता है। उन असत्कर्मों से हटाकर निकृष्ट योनियों में मारी गति को दूर कीजिए। अनेक कामादि विकार और अनेक शारीरिक रोग हमारा शोषण कर रहे हैं, उनसे आप हमें छुटकारा दिलाइए। हम अज्ञान वृत्तियों और अजागरूकताओं के वश हो कर्तव्य-विमुख हुए जा रहे हैं। आप उनसे मुक्त कर हमें ज्ञानी, प्रचेता और जागरूक बनाइये।

हे भगवन्! द्वेष-वृत्तियां भी हमारा पिण्ड नहीं छोड़ रही हैं। एक ही अमर परमात्मा के पुत्र होने के नाते परस्पर भाई-भाई होते हुए भी हम द्वेष-भावनाओं के शिकार हो आपस में लड़ रहे हैं, एक-दूसरे का संहार कर रहे हैं और इस प्रकार आपकी पवित्र सृष्टि को दूषित कर रहे हैं। हमें इन द्वेष-वृत्तियों से पार कीजिए। संक्षेप में कहें तो जो भी दुरित आकर हमारे अन्दर प्रविष्ट हो गये हैं, पाप, दुष्कर्म, दुर्व्यसन आदि आ घुसे हैं, उन्हें आप हमारे अन्दर से निकालकर बाहर कर दीजिए और हमारे आचरणों को पवित्र बना दीजिए।

इस प्रकार हमारे अन्दर से सब दुरितों को दूर करने तथा जीवन को पवित्र करने के पश्चात् आप हमें ऐश्वर्य प्रदान कीजिए। अपवित्र आत्मा और अनिर्मल व्यक्तित्व ऐश्वर्यों को सम्भाल नहीं सकता। उसके पास आकर ऐश्वर्य भी अभिशाप बन जाते हैं। अतः दुरित-निवारण के पश्चात् ही हम आन्तरिक और बाह्य ऐश्वर्यों को पाना चाहते हैं। साथ ही हम अकेले ही ऐश्वर्यों के अधिकारी नहीं होना चाहते, अपितु परिवार एवं राष्ट्र के समस्त वीरों को भी उसमें सहभागी बनाना चाहते हैं। हे परमप्रभु! हम पर आप अपनी अनवरत कृपा बरसाते रहें।

–'वेदमंजरी' से

अंधियारा तो बहुत है, दीपक हैं दो चार

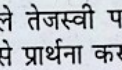

–डॉ. देवेन्द्र आर्य

तम कैसा भी हो मगर, कुछ पल का मेहमान।
तेरे नन्हे दीप में, सौ उजले दिनमान।।
हमने तो दीपक जला, धरा प्रीत के द्वार।
इस गहरे अंधियार का, यह सबल हथियार।।
कहा दीप ने सूर्य से, सुनो हमारी बात।
हम जिंदा अंधियार के, सह सौ-सौ आघात।।
एक दीप मन का जला, सुधि सपनों के द्वार।
जले भोर से भोर तक, रहे न जग अंधियार।।
इस प्रकाश के पर्व पर, भरें दीप भर नेह।
ज्योतित हो धरती गगन, सुख-समृद्धि हो गेह।।
चल भोर से भारे तक, लेकर दीप्ति मशाल।
किरणों से लिख दे सृजन, भारत भू का भाल।।
माटी के नन्हे दिये, सूरज मन के पंथ।
धरती से आकाश तक, लिखें ज्योति के ग्रन्थ।।
इन बदले हालात में, कुछ तो करें विचार।
अंधियारा तो बहुत है दीपक हैं दो चार।।
अन्तर्मन के दीपजलें, भर जग में उजियार।
अभी अहं के द्वार पर, जन्मों का अंधियार।।
किरणों के दीपक जला, मन! अंधियारे द्वार।
लिख प्रकाश के पर्व में, तम के माथे हार।।

वैदिक ऋचाओं में पर्यावरण चिन्तन

❐ पुष्पा पाल

यस्य भूमिः प्रमाऽन्तरिक्षमुतोदरम्।। दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।। भूमि जिसकी पादस्थानीय और अन्तरिक्ष उदर के समान है तथा द्युलोक जिसका मस्तक है, उस सबसे ज्येष्ठ ब्रह्म को नमस्कार है।

वेद ज्ञान के सागर हैं। ये प्रकृति एवं समस्त प्राणियों के शुभ चिन्तक हैं। वेदों में नीरोग रहने की प्रार्थना प्रमुख है। वैदिक ऋचाएं और उनसे प्रतिपादित यज्ञ-यागादि क्रियाएं अलौकिक हैं जो जगत् के समस्त प्राणियों का कल्याण करती हैं। वेद प्रकृति और पुरुष तथा उनसे उत्पन्न सृष्टि में, समन्वय के प्रतिपादक हैं। प्रकृति के सात्विक अंश से महत् तत्त्व की उत्पत्ति, महत् से त्रिगुणात्मक अहंकार, अहंकार से पांच ज्ञानेन्द्रियां और पांच कर्मेन्द्रियां, एक मन की उत्पत्ति, साथ ही शब्द स्पर्शादि पांच तन्मात्राओं से पांच महाभूतों पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल और आकाश की उत्पत्ति, सृष्टि के क्रमिक विकास को दर्शाती हैं। वेदों में इन्हीं पांच तत्त्वों तथा इनसे सम्बद्ध समस्त देवताओं का गुणगान किया गया है। यही पांचों तत्त्व वेदों के प्रत्यक्ष देवता हैं तथा पर्यावरण के निर्माता एवं पोषक हैं, जबकि समस्त प्राणी, उसके संरक्षक **यही कारण है कि मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने हजारों वर्ष पूर्व मानव जीवन के कल्याणार्थ पर्यावरण के महत्त्व तथा इसकी रक्षा के सम्बन्ध में, भरपूर चिन्तन किया था। वेदकालीन समाज में, न केवल पर्यावरण के सभी पहलुओं पर चौकन्नी दृष्टि थी, अपितु उसकी रक्षा और महत्त्व के प्रति भी स्पष्टतः जागरूकता थी। उस समाज में भी पर्यावरण प्रदूषण के संकट का आभास था, इसीलिए शुद्ध पर्यावरण के निर्माण में सहायक तत्त्वों एवं देवताओं का उस समाज ने नमन एवं संरक्षण किया। यज्ञ प्रक्रिया द्वारा भी पर्यावरण को शुद्ध रखने का प्रयास किया गया।**

मूलतः पर्यावरण की दृष्टि से पृथ्वी, वायु, सूर्य, अग्नि, जल, आकाश, ध्वनि, वनस्पति, पेड़-पौधे आदि कारक तत्त्व हैं। हमारे पूर्वजों ने वैदिक मन्त्रों में उनके गुणों का जो बखान किया है उसका संक्षेपतः आंशिकरूपेण वर्णन करना चाहूंगी। यह पृथ्वी ही समस्त प्राणियों का आधार है। अतएव ऋग्वेद में उसे माता की संज्ञा दी गई है तथा मानव को उसकी सेवा करने का सन्देश दिया गया है। ''उपसर्प मातरं भूमिम्'' यजुर्वेद के मन्त्र ''नमो मात्रे पृथिव्यै'' में पृथिवी माता को नमस्कार किया गया है। ''माताभूमिः पुत्रोऽहं'' कह कर अथर्ववेद का पृथ्वी सूक्त भूमि की महिमा का गुणगान करता है। इस सूक्त का यह मन्त्र–

उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यम् सन्तु पृथिवी प्रसूताः।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतं स्याम।।

जिसका अभिप्राय है कि हे मातृभूमि! तेरी सेवा करने वाले हम नीरोग और आरोग्यपूर्ण हों तुमसे उत्पन्न हुए समस्त भोग हमें प्राप्त हों। हम जागरूक बनकर दीर्घायु हों। तेरी सुरक्षा हेतु आत्मोत्सर्ग करने के लिए हम सदा तैयार रहें। किन्तु आज हम अपनी इस भूमि से कहां न्याय कर रहे हैं। अन्धाधुंध शहरीकरण, औद्योगीकरण एवं जनसंख्या वृद्धि के कारण वनों की हत्या की जा रही है। मिट्टी की पकड़ निरन्तर ढीली पड़ती जा रही है। चट्टानें खिसक रही हैं। पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है। वृक्षों के अभाव से तथा कृत्रिम गैसों से ऋतुओं का सन्तुलन बिगड़ता जा रहा है। भूमि की उर्वरता घटती जा रही है। ऐसे में हमें वैदिक मन्त्रों का पुनर्स्मरण अवश्य करना होगा।

यस्यामन्नं ब्रीहि यवौ यस्या इमाः पंचकृष्टयः।
भूम्यै पर्जन्यपत्न्यै नमोऽस्तु वर्ष मेदसे।। अथर्व. १२/१/४२

अर्थात् भोजन और स्वास्थ्य देने वाली सभी वनस्पतियां इस भूमि पर ही उत्पन्न होती हैं। पृथिवी सभी वनस्पतियों की माता और मेघ पिता है क्योंकि वर्षा के रूप में पानी बहाकर यह पृथिवी में गर्भाधान करता है।

यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत् सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातुः।।
–पृथिवी सूक्त

जिस पृथिवी पर समुद्र, नदियां और जल हैं, जिस पर अन्नादि कृषि सामग्रियां उत्पन्न हुई हैं तथा जिस पर प्राणवान् और गतिमान जगत चलता फिरता है, वह पृथिवी हमें हर प्रकार से प्रचुरता में रखे।

ईश्वर ने प्राणीजगत के लिए सम्पूर्ण पृथिवी के चारों ओर वायु का सागर फैला रखा है। **हमारे शरीर के भीतर, रक्त वाहनियों में बहता हुआ रक्त बाहर की ओर दबाव डालता रहता है, यदि इसे संतुलित न किया जाये तो शरीर की सभी धमनियां फट**

जायेंगी और जीवन नष्ट हो जायेगा। वायु का सागर ही इससे हमारी रक्षा करता है। वायु की शुद्धि जीवन के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। ऋग्वेद की ऋचाओं में वायु देवता की महत्ता इस प्रकार दर्शायी गई है–

आत्मा देवानां भुवनस्य गर्भो यथावशं चरति देव एषः।
घोषा इदस्य ऋण्वियरे न रूपं तस्मै वाताय हविषा विधेम।।
ऋक्. १०/१०८/४

इन्द्रादि देवों का भी जो आत्मा है अर्थात् इनमें जीव रूप से अवस्थित है, पंच महाभूतों का जो बीज रूप है या उनको गर्भ में धारण करने वाला है, ऐसा यह दिव्य शक्ति सम्पन्न वायु देवता अपनी इच्छानुसार विचरण करता है। **इस वायु की ध्वनि सुनाई देती है, रूप नहीं दिखाई देता। उस वायु देवता की हम हवि द्वारा पूजा करते हैं।** यजुर्वेद में इस तत्त्व को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है–तनून पाद सुरो विश्ववेदा देवो देवेषु देवः। पयो अनुक्तु मध्वा घृतेन।। **अर्थात् उत्तम गुण वाले पदार्थों में उत्तम गुण वाला, प्रकाशरहित तथा सर्वग्राह्य जो वायु शरीर में नहीं गिरता, ऐसा यह वायु कामना करने योग्य, मधुर जल के साथ श्रोत्र आदि मार्ग को प्रकट करे।** अथर्ववेद के ''यस्य वातः प्राणापानौ'' आदि मन्त्र में वायु को परम ब्रह्म का श्वास-प्रश्वास कहा गया है। वायु को शुद्ध तथा अशुद्ध दो भागों में बांटा गया है। एक श्वास लेने के योग्य शुद्ध वायु तथा दूसरा जीवमात्र के लिए हानिकारक दूषित वायु।

द्वामिमौ वातौ वात आ सिन्धो रा परावतः।
दक्षं ते अन्य आ वातु परान्यो वायु यद्रपः।।
ऋक्. १०/१३७/२

ऋग्वेद की इस ऋचा का अर्थ है कि प्रत्यक्ष भूत दोनों प्रकार की हवाएं सागर पर्यन्त और समुद्र से दूर प्रदेश पर्यन्त बहती रहती हैं। हे साधक! एक तो तेरे लिए बल को प्राप्त कराती है और एक जो दूषित है, उसे दूर फेंक देती है। हजारों वर्ष पूर्व निश्चित तौर से हमारे पूर्वजों को यह ज्ञान था कि हवा कई प्रकार की गैसों का मिश्रण है जिनके अलग-अलग गुण एवं अवगुण हैं। इनमें ही प्राण वायु आक्सीजन भी है जो जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

यददौ वात ते गृहेऽमृतस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवस्य।। ऋक्. १०/१३७/२अर्थात् इस वायु के घर में जो यह अमरत्व की धरोहर है, वह हमारे जीवन के लिए आवश्यक है। शुद्ध वायु कई रोगों के लिए औषधि का काम करती है।

आ त्वागमं शन्तातिभिरथो अरिष्टतातिभिः।
दक्षं ते भद्रमाभार्षं परा यक्ष्मं सुवामि ते।। ऋक्. १०/१३७/४

अर्थात् यह जानो कि शुद्ध वायु तपेदिक जैसे घातक रोगों के लिए औषधि स्वरूप है। हे रोगी मनुष्य! मैं वैद्य तेरी रक्षा के लिए आया हूं। तेरे लिए कल्याणकारक बल को शुद्ध वायु द्वारा लाता हूं और तेरे जीर्ण रोग को दूर करता हूं। ''वात आ वातु भेषजं शंभु मयो भु नो हृदे। प्राण आयुँषि तारिषत्।। ऋक्. १०/१८६/१ अर्थात् स्मरण रखिए शुद्ध ताजी हवा अमूल्य औषधि है जो हमारे हृदय के लिए दवा के समान उपयोगी है। यही हवा हमारी आयु को बढ़ाती है। इस प्रकार पर्यावरण की शुद्धता में वायु की सर्वाधिक सक्रिय भूमिका से वैदिक ऋचाएँ हमें पूर्णतया परिचित कराती हैं।

ऋग्वेद में अग्निस्वरूप सूर्यदेव को महिमामण्डित किया गया है। उसे देवताओं और मानवों के कार्यों का नियामक माना गया है। वेद के एक मन्त्र में वैज्ञानिक दृष्टि के अनुरूप सूर्य किरणों को वर्षा का हेतु माना गया है। ''श्रायन्त इव सूर्य' विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत। वसूनि जाते जनमान ओजसा प्रति भागं न दीधिम।।'' अर्थात् सूर्य की किरणें इन्द्र की सम्पूर्ण वृश्टि सम्पत्ति का भक्षण करती हैं पुनः उसी सम्पत्ति को वर्षण करने के समय यथाभाग उत्पन्न करती हैं। ऐसी किरणों से शोभायमान सूर्य को हम हृदय में धारण करते हैं। वेदों में सूर्य को स्थावर और जंगम जगत् की आत्मा कहा गया है। ''सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।। ऋक्. १/११५/१ अथर्ववेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि उदित होता हुआ सूर्य मृत्यु के सभी कारणों अर्थात् सभी रोगों को नष्ट करता है। **उदीयमान सूर्य से हल्की लाल किरणें निकलती हैं। इन लाल किरणों में जीवनीशक्ति होती है जो रोगों के निवारण की विशेष क्षमता रखती है। अतएव ऋग्वेद में कहा गया है कि उदित होता हुआ सूर्य हृदय के सभी रोगों तथा पीलिया और रक्त की कमी को भी दूर करता है। सूर्य की सात किरणों से सात प्रकार की ऊर्जा प्राप्त होती है**–अधुक्षत् पिप्युषीमिषम् ऊर्जं सप्तपदीमरिः। सूर्यस्य सप्त रश्मिभिः।। ऋक्. ८/७२/१६ अथर्ववेद ६/१०८/५ के अनुसार प्रातः सायं, मध्याह्न में सूर्य किरणों से मेधा प्राप्त होती है। उसी प्रकार अग्नि को भी सर्वोच्च स्थान पर स्थित

पृथिवी पति की संज्ञा दी गई है और वृष्टि का उत्पादक माना गया है। काण्व संहिता ३/३/२ के मन्त्र "अग्नि मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् अपाꣳ रेताꣳ सि जिन्वति।। का यही अर्थ है।

यज्ञ की हव्याग्नि के धुएं, ताप, ऊर्जा, गैस, राख और निश्चित फ्रीक्वैंसी में स्पन्दन करती मन्त्रध्वनि का पवित्र पर्यावरण के निर्माण में विशेष योगदान माना गया है। **हव्याग्नि का धुआं गाय के घृत, विशिष्ट वृक्षों के काष्ठखण्ड, जौ, धान आदि अन्न तथा सुगन्धित वनस्पति धूप का मिश्रित परिणाम है। वैज्ञानिक दृष्टि से धूम्रीकरण प्रक्रिया मिट्टी एवं वायुमण्डल में फैले रोग जनक जीवाणुओं को नष्ट करती है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक जे.ई. मिलर ने अपने शोध कार्य में यह सिद्ध किया है कि धूम्रीकरण का फसलों पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह देखा गया है कि जहां नित्य अग्निहोत्र यज्ञ होता है, वहां उत्पन्न किये गये पेड़ पौधे रोग मुक्त एवं स्वस्थ होते हैं। यज्ञ द्वारा उत्पन्न ऊर्जा अपने सभी संघटकों को जल कर CO_2 और H_2O गैस उत्पन्न करती है और ये गैस वायुमण्डल में समुचित ऊंचाई में पहुंच कर प्रदूषण को समाप्त करती हैं। यज्ञाग्नि की भस्म में रखे बीज कीटाणुमुक्त रहते हैं और यह पवित्र भस्म शरीर और मन को स्वस्थ रखती है।** तैत्तिरीय संहिता इसीलिए तो कहती है–"यत् ते अग्ने तेजस्तेनाहं तेजस्वी भूयासम्, यत् ते अग्ने वर्चस्तेनाहं वर्चस्वी भूयासम्, यत् ते अग्ने हरस्तेनाहं वर्चस्वी भूयासं।। तै. सं. ३/५/३

जल की शुद्धता पर अथर्ववेद में विशेष बल दिया गया है। इमा आपः प्र भराम्यक्ष्मा यक्ष्म नाशनीः। गृहानु प्र सीदाम्यमृतेन सहाग्निमा।। अथर्व. ३/१२/९ अर्थात् अच्छी प्रकार से रोग रहित तथा रोगनाशक इस जल को मैं लाता हूं। शुद्ध जलपान करने से मैं मृत्यु से बचा रहूंगा। शुद्ध जल मनुष्य को दीर्घ आयु प्रदान करता है तथा वह प्राणों का रक्षक एवं कल्याणकारी है। इस भाव

(शेष पृष्ठ १६ पर)

वेद मन्दिर की गौशाला : एक आग्रह एक निवेदन

देव दयानन्द के वेद प्रचार के आह्वान् को शिरोधार्य कर दयानन्द संस्थान विगत लगभग पांच दशक से आपके सहयोग-सम्बल के बल पर **"चारों वेदों का हिन्दी भाष्य"** तथा अन्य वैदिक साहित्य अब तक दो लाख से भी अधिक परिवारों में पहुंचाने में सफल रहा है।

महर्षि दयानन्द ने गौ पालन और गौ-रक्षण में प्रवृत्त रहने का भी वैदिक आस्थाओं के प्रति श्रद्धालु जन से आह्वान् किया था। दयानन्द संस्थान ने महर्षि के इस निर्देश के अनुसार महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम, वेदमन्दिर इब्राहीमपुर, दिल्ली में लगभग १५ वर्ष पूर्व एक गौशाला का शुभारम्भ किया था। इस गौशाला में गौवों की संख्या इस समय एक दर्जन हो गई है। इस गौशाला में उत्पादित गौ दुग्ध का वितरण आश्रमवासियों तथा समय-समय पर आने और ठहरने वाले अतिथि गण में किया जाता है।

गौभक्तों एवं उदारमना तथा स्व-संस्कृति के प्रति आस्थावान दानी सज्जन वृन्द से हमारा साग्रह निवेदन है कि संस्थान की गौशाला की गौवों को उत्तम चारा सुलभ कराकर गौ रक्षा के अपने दायित्व के निर्वहन में सहभागी बनें। जो भी सहयोगी जन चारा प्रदान करेंगे उनका यह सहयोग गौशाला के संचालन में भी ठोस योगदान सिद्ध होगा। अतः आपके सहयोग की तुरन्त आवश्यकता है। यदि आप राजधानी से दूरस्थ स्थान के निवासी हैं तो गौओं हेतु अपने योगदान की राशि **"दयानन्द संस्थान"** के नाम ड्राफ्ट अथवा मनीआर्डर द्वारा प्रेषित कर सकते हैं। दिल्ली के किसी भी बैंक का चैक भी भेज सकते हैं।

दयानन्द संस्थान द्वारा संचालित गौशाला के संचालन में चारा प्रदान करने वाले गौभक्त के नाम और राशि को 'जनज्ञान' मासिक में भी प्रकाशित किया जाएगा। दानराशि निम्न पते पर प्रेषित करें :-

अध्यक्ष, दयानन्द संस्थान

२२८६, आर्यसमाज मार्ग, करौल बाग, नई दिल्ली-५ फोन : ९८१०२५७२५४

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती *(आचार्य)* **राकेश रानी** *(अध्यक्ष)*

प्रभु, हमें सन्मार्ग पर ले चलो

–प्रो. धर्मवीर

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम।।

बड़ा सुपरिचित मन्त्र है। यजुर्वेद का प्रायः अन्तिम मन्त्र है। मन्त्र का भाव भी कुछ इसी प्रकार का है जहां पर सारे प्रयत्नों की समाप्ति दृष्टिगोचर होती है, उपासक अपनी समस्त सामर्थ्य प्रभु को समर्पित कर चुका है, स्वयं को उसकी शरण में डाल चुका है, उसकी इच्छानुसार चलने के लिए अपना मानस बना चुका है। अतः प्रभु से कह रहा है आप ही ले चलो–मेरे चलने से पहुंचना सम्भव नहीं है, नहीं है।

मन्त्र में ईश्वर को अग्नि रूप में देखा गया है। अग्नि क्रिया का सर्वाधार है, अग्नि के अभाव में क्रिया सम्भव ही नहीं है। फिर संसार की गति बिना अग्नि के कैसे सम्भव है। वह तो स्वयं अग्नि है, अग्निरूप है प्रकाश, ज्ञान क्रिया का भण्डार है।

वह अग्नि ही है। अग्नि उसका ही नाम है। उसको अग्नि के रूप में ही प्रत्यक्ष किया गया है। भक्त जानता है–इस अग्नि के बिना चेतना और क्रिया का अनन्त भण्डार कहीं और नहीं। संसार का सारा प्रकाश उसी अग्नि से प्रकाशित है। आंख उसी के सामर्थ्य से देख पाती है, सूर्य उसी के प्रकाश से प्रकाशित है, संसार की प्रत्येक वस्तु उसी से गतिमान् है।

अग्नि स्थूल को सूक्ष्म की ओर ले जाता है। सूक्ष्म बना देता है, अदृश्य कर देता है परन्तु प्रभाव बढ़ जाता है। स्थूल का प्रभाव कम है परन्तु सूक्ष्म होकर क्षमता बढ़ती है। अग्नि ऊर्ध्वगामी है, कहीं भी कभी भी उसका स्वरूप दृष्टि में आया तो वह ऊपर की ओर ही जाने वाला होगा। सूक्ष्म होगा तो ही ऊपर की ओर उठ सकेगा। स्थूल की तो अधोगति अवश्यम्भावी है। अतः अग्नि सूक्ष्म है, ऊर्ध्वगति वाला है, व्यापक है। अपने साथ दूसरों को भी विस्तृत करने की, व्यापक करने की क्षमता रखता है–वह ज्ञान का प्रकाश गति का कारण है, समिधा को प्रज्वलित कर अपने साथ प्रकाशित करता है, समिधा के साथ जलता है। प्रकाशित होता है, समाप्त हो जाता है, समाप्त कर देता है परन्तु वास्तव में समाप्त नहीं होता और न करता है। वह तो सूक्ष्म और व्यापक होकर अदृश्य होता है, स्थूल दृष्टि से ओझल हो जाता है। भक्त समिधा है तभी तो परमेश्वर को अग्नि के रूप में देख पाता है। गुरु के पास शिष्य समित्पाणि जाता है, बिना समिधा बने कुछ नहीं पाया जा सकता। समिधा बनना स्वयं को जलने के लिए–अग्नि में ढलने के लिए स्वयं को तैयार करना है। उसके लिए अपने को समर्पित कर देना है, कहीं कमी रही तो बात बनेगी नहीं। समिधा नहीं रही, समिधा गीली रही तो जलेगी नहीं। जल्दी नहीं जलेगी, बहुत धुआं होगा, प्रकाश नहीं होगा। अतः समिधा की–सूखी हुई समिधा की आवश्यकता है। तभी समिधा बना भक्त परमेश्वर को 'अग्ने' कहता है।

अग्नि से प्रार्थना करता है–सुपथा नय! आश्चर्य है–चलने के लिए पैर दिये हैं, विवेक के लिए, पथ की पहचान के लिए बुद्धि दी है, परन्तु भक्त जानता है इन पैरों से वहां नहीं पहुंचा जा सकता, भटका जा सकता है। संसार में भटकता रहता है, भटकता रहेगा जब तक वह यह नहीं समझ लेगा कि इन पैरों से नहीं चला जा सकता, वहां तक नहीं पहुंचा जा सकता। तब उपासक कहता है–अग्ने! नय–ले चल, ले जा। आज तक मैं जो भी चला, जो चलने का दम्भ किया वह तो व्यर्थ ही है–न मैं चला न मैं चल सकता हूं, आप ही ले चलो–मैं आपकी शरण में हूं। आप जहां ले जायेंगे वास्तव में वही सुपथ है। जिसे मैं सुपथ समझ रहा था वह तो पथ ही नहीं है–अन्धकूप है। मैं उसमें पड़ा चलने के भ्रम में रहा। मैं तो अब समझा हूं कि सुपथ तो तेरे बिना होता ही नहीं। इसलिए अग्ने! मुझे सुपथ से ले चल।

जब मैं जानता था कि मैं जानता हूं तब मेरा अहंकार मुझे कुछ जानने नहीं देता था। मैं जानने के स्थान पर जानने के दम्भ में जीता रहा हूं। जब मैंने तुझ ज्ञान के सागर को जाना है तो मैंने जाना है कि मैं कुछ भी नहीं जान पाया हूं, मैं कुछ भी जानने में समर्थ नहीं। मैं एक तुच्छ कण से स्वयं को जानने वाला समझता रहा हूं। हे अग्ने! आप ज्ञानमय हो–प्रकाशमय हो। आप ही मुझे ले चलो, अपने मार्ग से ले चलो–मैं आपके बिना नहीं चल पाऊंगा। मैंने सोचा था कि मेरा सामर्थ्य बहुत है, मैं सारे संसार का ऐश्वर्य एकत्रित कर लूंगा। सारा सुख मेरे पास होगा। मैंने जीवन भर प्रयत्न करके बहुत इकट्ठा किया, बड़े-बड़े महल खड़े किये, बहुत सारी भूमि का अधिपति बना और बहुत सम्पत्ति भी एकत्रित की। सारा संसार मेरी प्रशंसा करता था परन्तु आज मैं

देखता हूं कि मैंने सारी आयु और सारा सामर्थ्य पत्थरों के ढोने में लगा दिया और एक मजदूर जितना भी नहीं पा सका–जो पत्थर तो ढोता है परन्तु बदले में कुछ पाकर संतुष्ट हो जाता है। परन्तु मैं देखता हूं कि जिसको मैं ऐश्वर्य समझता था वह धन है ही नहीं, जिसको मैं सुख समझता रहा वह तो दुःख का ही मूल है। भला मैं उससे सुख किस प्रकार प्राप्त कर सकता हूं? इसलिए मेरा चला पथ सुपथ नहीं था, कभी भी नहीं हो सकता। सुपथ तो वही है जो रयि को, वास्तविक धन को, सत्यसुख को, प्राप्त करा के, वहां तक पहुंचा सके। इसलिए आप ही सुख को जानते हो। हे देव! सारे कर्मों को, सारे ज्ञान को आप ही जानते हो, अतः आप ही सुमार्ग पर लेकर चलो, दूसरा कोई ऐसा करने में समर्थ नहीं होगा।

अब तो मेरा यह सामर्थ्य भी नहीं कि मैं अपने आपको पाप से अलग कर सकूं। मेरे संस्कार इस प्रकार के हो गये हैं–जन्म-जन्मान्तर की छाया मेरे चित्त पर संचित है। मैं बहुत प्रयत्न करता हूं परन्तु संस्कार उसी ओर ले जाता है जहां से दूर होना चाहता हूं। क्योंकि पाप का मार्ग सीधा नहीं होता। वह टेढ़ा-मेढ़ा होता है। उसमें आंखमिचौनी है। हर मोड़ पर आगे कुछ पाने की आशा है और प्रलोभन बढ़ता ही जाता है। पाप से छूटने का मेरा सारा प्रयत्न धरा का धरा रह जाता है। आश्चर्य होता है कि टेढ़े मार्ग पर चलने का, बुराई करने का सामर्थ्य मुझ में कहां से आ जाता है और सुपथ पर-सरल पथ पर चलना आसान होना चाहिए पर उधर कदम ही नहीं उठते। क्यों नहीं उठते, यही तो मैं नहीं जान पाया।

ज्ञानी कहते हैं कि धार्मिक वह है जो सरल है। पता नहीं सब धार्मिक क्यों नहीं हो पाते। जो सहज है, सरल है, वह कठिन है, जो टेढा है, कुटिल है, दुर्लभ है, वही सरल प्रतीत होता है। इस संसार की रीति ही कुछ ऐसी है। यहां धर्म कठिन लगता है–अधर्म सरल और सत्य अस्वाभाविक लगता है, झूठ, सहज, ईमानदारी अनहोनी लगती है–बेईमानी आदत। तभी तो मैं छूट नहीं पाता। हे अग्ने! मुझे सरल और सहज होना ही तो नहीं आता। प्रभु, तुम ही मुझे कुटिल मार्ग की कठिनता से हटाकर पुण्य के सहज-सरल मार्ग का पथिक बना सकते हो। यही मेरी बार-बार आप से प्रार्थना है। मैं प्रार्थी होकर–याचक होकर आपकी शरण में आया हूं। मैं नमः करता हूं–बार-बार करता हूं–मेरा मुझ में अब कुछ भी नहीं बचा। मैं तो जैसा हूं तेरे आधीन हूं। यह नम्रता निरभिमानता ही सरलता का आधार है। जब नम्रता आ गयी फिर कुछ करना शेष नहीं रहा। सारे शास्त्र, सा उपदेश, सारे साधन यहां तक पहुंचने के लिए हैं। या से आगे जाने का सामर्थ्य तो किसी में नहीं–वह तो सा ईश्वर की इच्छा से ही संभव है।

जब एक बार बरेली में स्वामी दयानन्द के भाषण हो रहे थे तो प्रतिदिन ईश्वर के अस्तित्व पर नवयुवक मुन्शीराम तर्क करते थे। अन्तिम दिन युवक मुंशीराम ने कहा कि मु तर्क से तो आपने निरुत्तर कर दिया परन्तु विश्वास नहीं हुआ तब महाराज ने उत्तर दिया–नवयुवक, यह तो ईश्वर की इच्छ से होगा। जब प्रभु चाहेंगे तब तुम्हारी आत्मा में प्रकाश होगा बस यही सूत्र है जो विश्वास का आधार है–भूयिष्ठां ते न उक्तिं विधेम। ०-०-० **चांद बावड़ी, अजमे**

(पृष्ठ १४ का शेष)

को अभियक्त करने वाली ऋचा का श्रवण कीजिए–"श नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।। शं योरभि स्रवन्तु नः।। ऋक्. १०/९/४ इन्द्र, मरुत्, पर्जन्य वृष्टि कारक देवता हैं। इन्द्र की स्तुति करते हुए ऋग्वेद कहता है–य सूर्य य उषसं जजान यो अपां नेता स जनास इन्द्रः।।

ऋक्. २/१२/७

अर्थात् जिसने सूर्य और उषा को उत्पन्न किया और जो मेघों में से जलों को लाने वाला है, वही इन्द्र है। ऋग्वेद के पर्जन्यसूक्त का यह मन्त्र–

प्र वाता वान्ति पतयन्ति विद्युत, उदोषधीर्जिहते पिन्वते स्वः। इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत्, पर्जन्यः पृथिवीं रेतसावति।।

अर्थात् जब पर्जन्य पृथ्वी को अपने जल से सींचता है तब हवाएं चलती हैं, बिजलियां गिरती हैं, वनस्पतियां अंकुरित हो वृद्धि को प्राप्त होती हैं। अन्तरिक्ष जल की बूंदें टपकाता है और भूमि सम्पूर्ण संसार के हित के लिए सराबोर हो जाती है।

इसी प्रकार वृक्षों एवं वनस्पतियों की रक्षा तथा उनकी उपयोगिता के सम्बन्ध में भी वैदिक मन्त्रों में चिन्तन किया गया है। खाद्य प्रदूषण एवं ध्वनि प्रदूषण के दुष्प्रभावों को समझते हुए उनके निदान के सम्बन्ध में भी समुचित चिन्तन किया गया है।

अन्ततः सोम स्वरूप यह पर्यावरण सन्देश देता है–यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकः।

अर्थात् जो मेरे प्रति जागरूक और अनुकूल है, उसी से मेरी मित्रता है। ०-०-०

वैदिक-दर्शन

वेदार्थ को समझ पाने की कठिनाई

–डॉ. ज्ञानचन्द्र

वेद की अनेकशः टीकाएँ प्राप्त हैं। अर्थभेदों से पाठक खिन्न व भ्रमित होते हैं। क्योंकि प्राप्त वेदों में व अर्थों में सामान्य भेद-प्रभेद नहीं होते बलिक अत्यन्त भिन्न व प्रायः विपरीतार्थक अर्थ ही प्राप्त होते हैं। इसी कारण प्राचीनकाल में ही वेदों के विषय में परस्पर विपरीत मान्यताएँ प्रचलित हैं और आज भी वे घटने की बजाय और भी सामस्यिक व भ्रमोत्पादक हो गई हैं। इस काल के अनेकों **प्रबुद्ध वेदज्ञों में सर्वदा स्मरणीय ऋषि कल्प महर्षि दयानन्द वेदार्थकारियों में सर्वप्रसिद्ध हैं। उन्होंने वेद के सरलार्थ ही प्रस्तुत किए जो कि जन-साधारण तक वेद को पहुँचाने की परोपकारात्मक कामना से किए गए थे। वेद के गहनार्थ वे देने के इच्छुक थे किन्तु दैववशात् ऐसा हो न पाया। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में इस प्रकार का संकेत है।**

दूसरे वेदज्ञ हुए हैं श्री अरविन्द। उन्होंने पूरे वेदों के अनुवाद तो न किए किन्तु संकलित भागों के ऋग्वेद सूक्तों के अनुसाद प्रस्तुत किए। उनका रुझान रहस्यवादी व तीव्र साधना एवं अध्यात्म परक अर्थों और मन्तव्यों की तरफ रहा। वे वेदों के सम्बन्ध में अनेकों व्याख्या-विश्लेषक निबन्ध-लेखादि प्रस्तुत कर गए हैं जो वेद के सम्बन्धों में हमें प्रकाश व स्पष्टता प्रदान करते हैं। इसके पश्चात् पं. सातवलेकर के वेदानुवाद भी बहुत प्रसिद्ध हैं परन्तु वे सामान्य अर्थ के रूप में ही स्वीकृत हैं। **विद्वत् जन पंडित सातवलेकर के अर्थों को अल्प स्थान ही देते हैं।** अंग्रेजी में गणपतिमुनि व कपालिशास्त्री के वेदार्थ सम्मानित हैं परन्तु उनकी प्रकाशित प्रतियाँ अल्पप्राप्य ही हैं। अंग्रेजी में अन्य भी अनेक वेद-टीकाएँ हैं परन्तु वे इतस्ततः से प्राप्त अर्थों के संकलन द्वारा प्रस्तुत की गई बौद्धिक समीक्षाएँ हैं, जिनमें मौलिकता का अभाव है।

एक तथ्य ऐसा है कि वेद को समझने के लिए पात्रता की आवश्यकता को लोग ठीक से नहीं समझ पाते। वेद स्वयं स्थान-स्थान पर अपने अध्ययन व शुद्ध ज्ञान के लिए पात्रता के विषय में स्पष्ट बताते हैं। जिसे लोग पढ़ कर भी श्लेष, उपमा व अलंकार समझ कर ध्यान नहीं देते। वेद को समझ पाने के लिए वेदार्थ पात्रता पूर्णतः अपरिहार्य है। मात्र संस्कृत भाषा, व्याकरण और निरुक्तादि का ज्ञान वेदार्थ की दिशा में अति अल्प सहायक हैं। वेद की पात्रता के बिना वेदार्थ का भाषात्मक, शब्दात्मक ज्ञान तो हो जाएगा परन्तु उसके मर्मार्थ तक पहुँचा असंभव ही होगा। अपात्र के लिए वेदार्थ एक मृगतृष्णा जल के समान ही रहेंगे और वेद मुहरबन्द, सील बन्द पुस्तकें।

यह मान्यता या अवधारणा भी उतनी ही पुरानी है जितने कि वेद की ऋचाओं में अत्यन्त गुह्य अर्थ व रहस्यमय दिव्य ज्ञान छिपा है। इस विश्वास का एक सुदृढ़ आधार और सबल व आनुभविक तर्क था। वैदिक काल के तपःशुद्ध ऋषिगण जानते थे कि वैदिक ऋचाएं चेतना के अति उच्च गुप्त व अज्ञात आयाम से अवतरित हुई हैं। उन आयामों तक तप-साधना द्वारा पहुँच बना कर ही ऋषि गण वेदार्थों को जानते समझते थे। वेद के शब्द ऐसे अक्षर-खोल और वाणी-आवरण हैं जोकि किसी ज्ञानवान् व तपस्वी तथा उच्चस्तर प्राप्त योगवेत्ता द्वारा ही हटाए व निस्सरित किए जा सकते हैं और वही समर्थ व सत्पात्र रहस्यज्ञानी वेदार्थ को जान सकता है अन्यथा समस्त वेदार्थ समझने के प्रयास शशकशृंगवत् व्यर्थ व अनुपयोगी ही सिद्ध होते हैं। सामान्य भाषाज्ञानी व वैयाकरणी मात्र के आगे मंत्र अपने गूढ़ार्थ नहीं खोलते। शब्दों के रूढ़ार्थ में ही सामान्य अध्येता फंस कर रह जाता है। चतुर्थ मण्डल में, ऋग्वेद में ऋषि वामदेव तीसरे सूक्त में कहते हैं–"मैं अन्तःप्रकाशित अपनी मति तथा शब्दों के द्वारा पथखोजक और गुह्यार्थक वचनों को प्रकट कर रहा हूँ जो केवल द्रष्टा ऋषि के लिए ही अपने अन्तर अर्थ को बताने वाले हैं।" ऋषितम व द्रष्टातम के लिए ही आन्तर अर्थ खोलने वाले कहते हैं ऋषि वामदेव। इस ऋषि व द्रष्टा की शर्त पर ध्यान देना आवश्यक है। इसी प्रकार एक सुख्यात् मंत्र हमें यह वेदार्थ जानने की शर्त व पात्रता बताता है। दीर्घतमा का प्रसिद्ध वचन है–"ऋचाएँ उस परम आकाश में रहती हैं जो अविनाश्य व अपरिवर्तनीय हैं तथा समस्त देवशक्तियां जिसमें स्थित हैं।" साथ ही वह एक प्रहारात्मक स्वर में इसी मंत्र में यह भी कहता है कि "जो उस परमाकाश, परमायाम तक ही नहीं पहुँच वह ऋचा से क्या करेगा।" अर्थात् उसका वेदार्थ ज्ञान का प्रयास व्यर्थ ही है। यह ऋचा वेद के प्रथम मण्डल के एक सौ चौंसठ सूक्त की उन्तालीसवीं ऋचा है। इसी मण्डल-सूक्त की पैंतालीसवीं ऋचा में वह ऋषि वाणी के निर्गमन के चार स्तरों का संदर्भ देता है। इनमें चौथा स्थान व स्तर तो मानवीय वाणी का है जहाँ से मानवों के साधारण शब्द आते हैं। परन्तु अन्य तीन स्तर गुहा में ही छिपे रहते हैं। ऋग्वेद के मंडल दस के सूक्त इकहत्तर में बृहस्पति आंगिरस का

कथन है कि "कोई तो इस वाणी को मन से देखता हुआ भी नहीं देख पाता, अन्य कोई इस वाणी को सुनकर भी नहीं सुन पाता नहीं समझ पाता। क्योंकि यह वेदवाणी किसी को ही अपने स्वरूप को प्रकट करती है जैसे पति के लिए पत्नी स्वयं को उद्घाटित कर देती है।" अगले पांचवें मन्त्र में पुनः कहा गया है कि, "अन्य लोग वाणी के वेद रूपी गौ के दूध को स्थिर रूप से पी पाने में असमर्थ रहते हैं और इस प्रकार भ्रमते हैं मानो वह गौ बन्ध्या हो और फल-फूल व उपयोग रहित वृक्ष के समान हो।"

कितना स्पष्ट और प्रभावकारी है वेद का यह वचन। संशय संदेह की कोई गुंजाइश ही नहीं है। ऋग्वेद काल में भी यह माना जाता था कि बहुसंख्यक ऋचाओं के अर्थ गुह्य हैं और गुप्त रखे जाते हैं जो मात्र दीक्षित सुयोग्य शिष्य को गुरु द्वारा प्रदान किए जाते थे। अतः वेद के प्रति जो आदर-सम्मान एवं एक आदरमिश्रित भय-संकोच का भाव है उसके पीछे वेद की दिव्य उच्चता, दैवी शुद्धता तथा अग्निरूप पावनता ही कारण थी जिससे सनातन काल से उन्हें भारत की अन्तरात्मा का दिव्य दीप्त चिद्कण रूप माना जाता रहा है क्योंकि वे ऐसे ही हैं।

भौतिकता प्रधान तर्कवादी युग के योरोपीय पंडित अपने प्रत्यक्षवादी बुद्धि से वेद के अर्थों की एक परम्परा डाल गए जो अब तक प्रभावी है। परन्तु वेद को न तो अपरिपक्व नव-विज्ञान बुद्धि से जाना जा सकता है और न अक्षरभोजी बौद्धिक व्यायामों और ऊहापोहों से। दोहरे, तिहरे और अतीव गहन व रहस्यवादी अर्थों को साधना, तप, संयम और परिपूर्ण समर्पण के द्वारा शुद्ध मन होने पर भी वेद के प्रति असीम भक्ति के द्वारा ही समझा जा सकता है। "वेदों में क्या है" आदि के सरिता आदि पत्रिकाओं के निकृष्ट व उथले लेखों या ज्ञान लव दुर्विदग्ध पंडितों की व्याख्याओं से नहीं जाना जा सकता। निरुक्त और व्याकरण आदि भी पश्च सहायता हैं। प्रथम अहर्ता है तपशुद्ध मानस उपासनाशुद्ध प्राण, संयम शुद्ध देह तथा निरास्रव निर्मल चैत्यात्मा। अन्यथा वेद अलिफलैला की कहानियों से अधिक कुछ नहीं महसूस होंगे। वेद के प्रति भारतीय वैदिक आर्य-हिन्दू मानस में जो गहन व दैवी समादर का भाव है उसके कुछ ठोस और गहरे तार्किक कारण हैं। इसके प्रमाण भारतीय पुरा इतिहास में बिखरे पड़े हैं।

–श्री अरविन्द चेतना समाज रजि. शिक्षात्मक न्यास-१९८१, ६५६२/१, चमेलियान रोड, दिल्ली-११०००६

अन्तर्राष्ट्रीय सत्यार्थप्रकाश महोत्सव उदयपुर में सम्पन्न

उदयपुर : सत्यार्थप्रकाश के प्रणयन की १२५वीं वर्षगांठ पर आयोजित सत्यार्थप्रकाश महोत्सव का उद्घाटन ५ अक्टूबर को पूर्व उपराष्ट्रपति श्री भैरोंसिंह शेखावत ने किया। उन्होंने कहा, सत्यार्थप्रकाश अब केवल घरों तक सीमित नहीं रहा। समय आ गया है कि इसका ज्ञान जनसाधारण तक पहुंचे। जिस तरह आम लोग रामायण और महाभारत का पाठ नहीं करते लेकिन हनुमान चालीसा पढ़ने में रुचि लेते हैं। सत्यार्थप्रकाश का भी एक ऐसा ही संक्षिप्त रूप तैयार होना चाहिए जिसे आम लोग जेब में रख सकें और उसका अध्ययन कर सकें। पूर्व उपराष्ट्रपति गुलाब बाग परिसर उदयपुर में तीन दिवसीय सत्यार्थप्रकाश महोत्सव के उद्घाटन समारोह में बतौर मुख्यअतिथि बोल रहे थे। उन्होंने कहा कि सत्यार्थप्रकाश एक खजाना है और इस खजाने पर लगा ताला खोलने की आवश्यकता है। यह तभी सम्भव हो सकेगा जब हम ईमानदारी से इस गौरवशाली ग्रन्थ का अध्ययन करेंगे। श्री शेखावत ने कहा कि नवलखा महल किसी तीर्थ से कम नहीं है। दुर्भाग्य यह है कि हम पहले इसका महत्व नहीं जान पाये। समारोह के मुख्य वक्ता राज्यसभा सदस्य डॉ. रामप्रकाश ने कहा कि सत्यार्थप्रकाश रूढ़ियों का ग्रन्थ नहीं है, बल्कि एक चिन्तन है। उन्होंने कहा कि नवलखा महल वैदिक संस्कृति का रिसर्च केन्द्र बने जहां देश-विदेश से लोग आएं और ग्रन्थ के बारे में चिन्तन करें। आर्य संकल्प लें कि प्रतिदिन सत्यार्थप्रकाश का एक पृष्ठ अवश्य पढ़ेंगे। कार्यक्रम के प्रारम्भ में सत्यार्थप्रकाश न्यास के कार्यवाहक अध्यक्ष श्री अशोक आर्य ने महोत्सव की जानकारी दी। न्यास अध्यक्ष कैप्टन देवरत्न आर्य, एमडीएच के चेयरमैन महाशय धर्मपाल, शिकागो के डॉ. सुखदेव चन्द्र सोनी, समारोह अध्यक्ष स्वामी सुमेधानन्द तथा आचार्य बलदेव आदि गणमान्य महानुभाव मंच पर उपस्थित थे। महोत्सव के द्वितीय सत्र में युवा संचेतना सम्मेलन स्वामी सुमेधानन्द जी की अध्यक्षता में हुआ। इसमें स्वामी ओमानन्द, महंत मुरली मनोहर शरण शास्त्री, यूटीआई के चेयरमैन शिवकिशोर सनाड्य, बी.एल. अग्रवाल उपस्थित थे। मुख्यअतिथि श्रीमती किरण महेश्वरी ने कहा कि देश की ६० प्रतिशत जनसंख्या युवा है। उन्हें सही मार्ग दिखाने के लिए सत्यार्थप्रकाश पढ़ने की सीख देनी होगी। सत्यार्थप्रकाश महोत्सव का शुभारम्भ यज्ञ से हुआ। सत्यार्थप्रकाश महोत्सव के दूसरे दिन विशाल भव्य शोभायात्रा का आयोजन किया गया, जो उदयपुर के मेन बाजारों से होती हुई लगभग चार किलोमीटर का रास्ता तय करती वापस नवलखा महल पहुंची। शोभा यात्रा के स्वागत में जगह-जगह स्वागत द्वार लगाए गए थे।

दीपावली के दिन निर्वाण दिवस पर विशेष

युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती

–डॉ. धर्मपाल आर्य

उन्नीसवीं शताब्दी में उत्पन्न और विकसित पुनर्जागरण काल के अनेक आन्दोलन भारतेतिहास के अध्येता के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। उस समय नैतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन में सर्वत्र अशान्ति, अस्थिरता तथा अराजकता व्याप्त थी। देश सांस्कृतिक संकट की लपेट में था। लोग अन्धविश्वासों तथा सामाजिक कुरीतियों से ग्रस्त थे। देश पराधीन था। यह पराधीनता किंकर्तव्यविमूढ़ता का पर्याय बन गई थी। स्वतंत्रता, बन्धुत्व तथा एकता जैसे उदात्तभाव किसी के मन में ही न आते थे। भारतीय शिक्षा पद्धति स्वदेशी के प्रति हेय तथा विदेशी के प्रति प्रेय भावों को उद्दीप्त कर रही थी। ऐसे ही युग में महर्षि दयानन्द सरस्वती का इस पुण्य धरा पर जन्म हुआ। उसने विभिन्न क्षेत्रों में धूम मचा दी। भारतीय जनमानस को झकझोर दिया। उसे प्राचीन गौरव तथा स्वअस्मिता और स्वराज्य की अवधारणा से परिचित कराया, सामाजिक कुरीतियों और अंधविश्वासों के केंचुल को उतार फेंकने की प्रेरणा दी, नारी जाति के लिए सम्मान तथा दलितों के लिए सामाजिक न्याय दिलवाने का महत्तर कार्य किया। उन्होंने स्वधर्म, स्वभाषा, स्वराष्ट्र और स्वसंस्कृति को स्वदेशोन्नति का आधार मानकर जनजागृति के क्षेत्र में महान कार्य किया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म गुजरात प्रान्त के मौरवी राज्य के टंकारा नामक ग्राम में फाल्गुन बदी दशमी संवत् १८८१ (२ फरवरी सन् १८२४) शनिवार को हुआ। उनके पिता का नाम श्री कर्षण जी तिवारी व माता का नाम यशोदा बाई था। उनका जन्म का नाम मूलशंकर था। श्री कर्षण जी तिवारी औदीच्य ब्राह्मण थे तथा शिव के उपासक थे। कुल परम्परा के अनुसार बालक मूलशंकर को ५ वर्ष की आयु में वर्ण शिक्षा का ज्ञान कराया गया। ८ वर्ष की आयु में उनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। उन्हें अनेक मन्त्र, स्तोत्र कण्ठस्थ करा दिए गए। उन्होंने १४ वर्ष की आयु तक व्याकरण, यजुर्वेद और वेदों के कुछ भाग याद कर लिए थे।

फाल्गुन कृष्ण संवत् १८९५ को शिवरात्रि का पर्व था। पिता के आदेश पर मूलशंकर ने भी शिवकथा माहात्म्य सुनने के बाद शिवरात्रि उपवास व्रत रखा, रात को मूलशंकर शिवपूजा और जागरण के लिए पिता के साथ शिवालय गए। आधी रात बीत गई तो भक्तजन एक-एक करके सोने लगे, परन्तु मूलशंकर जो सत्य और श्रद्धापूर्वक व्रती था, जागता रहा। सरल हृदय बालक सत्यनिष्ठा और विश्वास के साथ निरन्तर शिवलिंग को देख रहा था। एक विचित्र घटना हुई उसकी आत्मा में चकाचौंध बिजली-सी चमक गई। उसकी आत्मा में नव जागृति सी उत्पन्न हुई। एक चूहा आया, चढ़ावे की वस्तुएं खा गया और उछलकर मूर्ति के ऊपर चढ़ गया। मूलशंकर का विश्वास हिल गया। शिव जी तो पाशुपत अस्त्र से बड़े-बड़े राक्षसों का संहार करते हैं। यह सच्चा शिव नहीं है। उसने पिता को जगाया। पिता को झुंझलाहट हुई पर उन्होंने बालक को बहुत समझाया कि सच्चा शिव तो कैलाश पर्वत पर है, यहाँ कलियुग में उसका साक्षात् नहीं होता है, यहाँ पर तो उसकी पूजा आराधना की जाती है। परन्तु मूलशंकर को इन बातों से सन्तुष्टि नहीं हुई। वह चिन्ता से व्याकुल होकर विचार निमग्न हो गया। उसे मूर्त्तिपूजा में अश्रद्धा हो गई। सच्चे शिव को प्राप्त करने की अदम्य लालसा उसके मन में जग गई। कुछ दिन बाद उनकी छोटी बहन और उसके कुछ दिन बाद उसके धर्मात्मा चाचा की मृत्यु हो गयी। इन घटनाओं ने वैराग्य भावना को जन्म दिया। अब उनके दो व्रत हो गए–सच्चे शिव को प्राप्त किया जाए, अमर पद प्राप्त किया जाए। मूलशंकर ने एक दिन घर छोड़ दिया। मूलशंकर को किसी ने बताया कि सच्चे योगी से ही सच्चे शिव और अमर पद प्राप्ति का मार्ग पता चलेगा। उन्होंने बड़े-बड़े योगियों की खोज प्रारम्भ कर दी। उन्होंने दीक्षा ली और अपना नाम 'शुद्ध चैतन्य' रखा। एक परिचित वैरागी से पुत्र का पता पाकर पिता श्री कर्षण जी तिवारी सिद्धपुर के मेले में पहुँचे और वहां से मूलशंकर को पकड़कर वापिस घर ले आए, पर जिसके हृदय में लौ लगी हो, वह कहाँ रुकने वाला था। शुद्ध चैतन्य तो संसार के बन्धनों से छुड़ाने आया था वह कहाँ बंधा रहता। एक दिन अवसर पाकर वह पुनः भाग निकला। बस यही अन्तिम मिलन था उसका पिता और परिवार वालों से।

बालक मूलशंकर, ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य और फिर

आगे दयानन्द सरस्वती इस सतत् यात्रा में उन्होंने कितने कष्ट उठाए होंगे, यह वही जान सकता है जिसने इस दिशा में कभी प्रयाण किया हो। उस दृढ़व्रती बालक ने तो यही मार्ग चुना था। अनेक संकटों का सामना करता हुआ, वह बालक युवा ब्रह्मचारी भूखा प्यासा, गर्मी-सर्दी सहन करता हुआ, बीहड़ जंगलों को पार करता हुआ, नर्मदा के किनारे चलकर चाणोद में पहुँचकर स्वामी पूर्णानन्द से मिला। स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती ने शुद्ध चैतन्य को उसके आग्रह पर संन्यास की दीक्षा दी। अब उनका नाम दयानन्द सरस्वती हो गया। इधर-उधर भ्रमण करते हुए, उनका परिचय अनेक योगियों से हुआ। उन्होंने योगविद्या सीखी और कई विद्वानों से अनेक ग्रन्थ भी पढ़े। ऋषि दयानन्द तो वीतराग संन्यासी और आदर्श त्यागी थे। जब ओखी मठ के महन्त ने उनके सामने मठ का उत्तराधिकारी बनाने का प्रस्ताव रखा तो उन्होंने कहा कि ''यदि मुझे धन की अभिलाषा होती, तो मैं अपने पिता की संपत्ति को, जो तुम्हारे इस ऐश्वर्य से कई गुना अधिक थी, न छोड़ता।'' महन्त के पूछने पर कि वह कौन-सी वस्तु है जिसकी खोज में तुम इतने परेशान हो। महर्षि दयानन्द ने उत्तर दिया–''सच्चे शिव का साक्षात्कार और मृत्यु से बचने के लिए मोक्ष प्राप्ति के उपाय।'' महन्त के पास धन व ऐश्वर्य तो था, पर न सत्य था, न शिव और न मृत्यु से बचने के लिए मोक्ष प्राप्ति के उपाय। वह वहाँ से भी चल पड़ा। प्रभु की जिस पर कृपा होती है, वह अनेक दु:खों को पार करता हुआ, अपने लक्ष्य तक पहुँच ही जाता है। किसी ने उन्हें प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती का पता दिया। ज्ञान और योग की इच्छा करने वाले युवा संन्यासी मथुरा पहुँचे और कार्तिक शुक्ल २, संवत् १९१७ (१४ नवम्बर १८६०) को उन्होंने परम विद्वान् जगद्गुरु विरजानन्द दण्डी की कुटिया का द्वार खटखटाया। अन्दर से आवाज आई ''कौन''। दयानन्द ने उत्तर दिया ''यही तो मैं जानना चाहता हूँ कि मैं कौन हूँ।'' स्वामी विरजानन्द ने जान लिया कि सत्य विद्या का जिज्ञासु, सत्यनिष्ठ शिष्य आया है। पूज्य गुरुवर ने दयानन्द सरस्वती को पाणिनि व्याकरण, पातंजल योगसूत्र तथा संपूर्ण वेद-वेदांग का अध्ययन कराया और चलते समय आदेश दिया–''पुत्र! विद्या को सफल कर दिखाओ। परोपकार करो तथा सत्य शास्त्रों का उद्धार करो, मत-मतान्तरों की अविद्या को मिटाओ। वेदों के प्रकाश से इस अज्ञान रूपी अन्धकार को समाप्त करो। वैदिक धर्म का आलोक सर्वत्र विकीर्ण करो। यही मेरी गुरुदक्षिणा है।''

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने नतमस्तक हो, गुरुवर के आदेश को शिरोधार्य किया–''यह कार्य कठिन है, शक्ति कम, फिर भी आज्ञा सिर माथे पर, आयु पर्यन्त इसके लिए कार्य करूँगा।'' गुरुवर ने कहा–'पुत्र! ईश्वर तेरे पुरुषार्थ परिश्रम को सफल करें। यह मेरा आशीर्वाद है। यह मैं एक अन्तिम शिक्षा देता हूँ कि मनुष्य कृत ग्रन्थों में परमेश्वर और ऋषियों की निन्दा है, परन्तु ऋषि कृत ग्रन्थों में नहीं। इस कसौटी को हाथ से न छोड़ना।''

महर्षि दयानन्द सरस्वती गुरुगृह से निकलकर अनेक स्थानों पर गये। उन्होंने हरिद्वार में पाखण्ड खण्डिनी पताका फहरायी, कर्णवास प्रवास के समय राव कर्ण सिंह की तलवार तोड़कर उस पर दया दिखाई, उदयपुर में स्त्री जाति मातृशक्ति के प्रति सम्मान प्रदर्शित किया, एकलिंग महादेव की गद्दी के प्रति कोई मोह न रख कर वीतराग भाव दर्शाया, अनूपशहर में स्वयं की हत्या करने का प्रयास करने वाले को भी क्षमा दान दिया, अम्बादत्त वैद्य और पं. हीरा बल्लभ को शास्त्रार्थ में पराजित करके पाषाण मूर्तियों का विसर्जन कराया, फर्रुखाबाद, कानपुर, काशी में शास्त्रार्थ किए, कलकत्ता में ब्रह्म समाज के नेता बाबू केशवचन्द्र सेन तथा देवेद्र ठाकुर को प्रभावित किया और यहीं से हिन्दी में बोलना लिखना प्रारम्भ किया। आगे चलकर उन्होंने चैत्र शुक्ल प्रतिपदा संवत् १९३२ (७ अप्रैल १८७५) को गिरगाँव, मुम्बई में डॉक्टर मानिक चन्द की वाटिका में नियमानुसार आर्य समाज की स्थापना की। वहाँ से महर्षि दयानन्द सरस्वती का कार्य दिग्दिगन्त व्यापी हो गया। उनके विचारों का चारों दिशाओं में स्वागत हुआ। उनके विचार सुप्तप्राय आर्य जाति को झकझोरने वाले थे। आर्य समाज के नियम संपूर्ण विश्व के लिए, सभी के लिए सर्वमान्य थे। ये नियम कालातीत हैं। वेदों के अध्ययन तथा समाज कल्याण के भाव को इनमें वरीयता दी गई है। महर्षि दयानन्द सरस्वती के क्रान्तिकारी विचार देशोत्थान तथा मानव जाति के कल्याण के लिए सर्वमान्य हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने देखा था कि राजनैतिक रूप से पराधीन जनता अपनी अस्मिता खो बैठती है। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' में इस गंभीर विषय पर गहन चिन्तन किया है–''सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्यकुल ही में

पैदा हुए थे। अब इनके सन्तानों का अभाग्योदय होने से राजा भ्रष्ट होकर विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है।''

''कोई कितना भी करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। मतमतानतर के आग्रहरहित, पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी।''

''जब आपस में भाई भाई लड़ते हैं, तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है।''

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेद को सत्य विद्याओं का ग्रन्थ माना है। उनकी दृष्टि में वेद के सभी शब्द यौगिक हैं, और इसीलिए मानवी इतिहास शून्य हैं। वेद की सभी शिक्षाएं सार्वकालिक और सार्वभौमिक हैं। महर्षि की वेदार्थ शैली सायण आदि वेदभाष्यकारों से भिन्न है तथा यास्काचार्य आदि निरुक्तकारों की श्रेणी की हैं। उन्होंने शंकर, रामानुज आदि प्राय: सभी मध्यकालीन आचार्यों के संकुचित विचारों की अवहेलना करते हुए वेद का द्वार मनुष्य मात्र के लिए खोल दिया है। यजुर्वेद के मंत्र ''यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य:'' की घोषणा करते हुए, स्त्रियों और तथाकथित शूद्रों तथा अतिशूद्रों को भी उन्होंने वेदाध्ययन का अधिकार मान्य किया। उन्होंने वेद को स्वत: प्रमाण तथा अन्य शास्त्र ग्रन्थों को परत: प्रमाण माना। उन्होंने मूर्त्ति पूजा, मृतक श्राद्धादि पौराणिक प्रथाओं को अवैदिक मानते हुए हेय ठहराया और घोषणा की कि परमात्मा की कोई मूर्त्ति नहीं होती। ''न तस्य प्रतिमा अस्ति।'' उन्होंने वेदों के आधार पर निराकार ईश्वर की ही पूजा का विधान किया।

महर्षि के प्रादुर्भाव के समय भारतवासी वेद के नाम मात्र से परिचित थे। महर्षि दयानन्द ने वैदिक ज्ञान से जनता को परिचित कराया, पुर्तगीज पादरियों द्वारा वेद के नाम पर फैलाए गए भ्रमों का उन्मूलन किया। उन्होंने वेद प्रतिपादित धर्म का प्रचार करने के उद्देश्य से ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, सत्यार्थप्रकाश और संस्कारविधि नामक ग्रन्थों का प्रणयन किया। इससे धोखे से हिन्दुओं को विधर्मी बनाने के पाश्चात्य प्रयास को धक्का लगा। ऋषिवर ने शुद्धि का द्वार खोलकर परावर्तन का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने अपने जीवनकाल में ही शुद्धि को क्रियात्मक रूप प्रदान कर दिया था। वे वेदों का गंभीर अनुशीलन करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि वेदों में जिन नैतिक, पारिवारिक, सामाजिक कर्त्तव्यों का विधान किया गया है, उसे मानवमात्र के लिए कल्याणकारी धर्म के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। उन्होंने वैदिक धर्म का प्रतिपादन करके आर्य जाति पर महान् उपकार किया है। उन्हें ''वेदों वाला दयानन्द'' कहा गया। वैदिक सभ्यता तथा संस्कृति के प्रति व्याप्त अवमानना तथा पाश्चात्य संस्कृति के प्रति सम्मान की भावना को ऋषिवर ने उखाड़ फेंका। उन्होंने समय की धारा को मोड़कर प्राचीन सभ्यता के प्रति श्रद्धा और सम्मान की भावना को जागृत किया। इस बलवती भावना का प्रचार महर्षि दयानन्द सरस्वती के महान व्यक्तित्व, उनके अखण्ड ब्रह्मचर्य, उनके त्याग और तपस्या तथा अपूर्व पांडित्य तथा निर्भीक सत्योपदेश के कारण ही सम्भव हो पाया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का विशाल हृदय सभी को एक सूत्र में जोड़ना चाहता था। उन्होंने वर्णाश्रम व्यवस्था को सही अर्थों में व्यवहार्य सिद्ध किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों तथा अन्धविश्वास के गहन पंक से आर्यजाति को बाहर निकाला। बाल विवाह के विरुद्ध सशक्त आवाज उठाई। ब्रह्मचर्य की महिमा का सिक्का, अपने उपदेशों और अपने क्रियात्मक जीवन से लोगों के हृदय में जमा दिया। बाल विवाह की भाँति वृद्ध विवाह भी घोर अनिष्ट कर रहा था। इन दोनों का दुष्परिणाम था कि देश में करोड़ों विधवाएं घोर यातना का जीवन जी रही थीं। भ्रूण हत्या, गर्भपात, नवजात बालिकावध आदि अनेक पातक आर्य जाति के लिए कलंक का टीका बने हुए थे। महर्षि दयानन्द ने इन विधवा बालिकाओं को त्राण दिलाया और विधवा विवाह की व्यवस्था की। मातृ शक्ति होते हुए भी उस युग में स्त्री जाति का घोर अपमान होता था। उन्हें पढ़ने-लिखने का भी अधिकार नहीं था। शंकराचार्य की व्यवस्था थी–''स्त्री शूद्रैनाधीयताम्।'' ऋषि दयानन्द ने इन्हें शिक्षा की अधिकारिणी ठहराया, उन्हें वेदाध्ययन का अधिकार दिया। इसी का परिणाम है कि आज हमारे देश में कन्याओं के लिए ऊँची से ऊँची शिक्षा का प्रबन्ध किया जा रहा है। हमारी बेटियाँ सभी क्षेत्रों में प्रशस्त पथ पर अग्रसर हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जन्मगत् जाति-पाँति तथा अस्पृश्यता का जमकर विरोध किया। आर्य जाति अनेक कल्पित जातियों और उपजातियों में विभक्त हो रही थी। प्रत्येक का खानपान, शादी ब्याह पृथक-पृथक था। उन्होंने इस विष बेल को समूल उखाड़ फेंकने के

लिए वेद प्रतिपादित वर्णाश्रम व्यवस्था का प्रचार किया। आज सर्वत्र अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाह उन्हीं के उस सम्यक् प्रचार का प्रतिफल हैं। उन्होंने दलित जातियों के साथ, उच्च जातियों द्वारा किए जा रहे अमानवीय व्यवहार का भी विरोध किया। इसी भेदभाव के कारण लोग विधर्मी बनते जा रहे थे। उन्होंने कर्मणा वर्ण व्यवस्था का प्रतिपादन करके सभी को समान अवसर प्रदान किए। ऋषिवर ने देश, काल और पात्र को देखकर सात्विक दान देने की प्रथा प्रचलित की। जन्मना ब्राह्मण अथवा मठाधीश को दिया गया दान, निकम्मेपन को जन्म देता है। उन्होंने कहा कि दान उसी को दो, जो उसे सत्कार्य में लगाए।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नयन में अपूर्व योगदान दिया। उनकी मातृभाषा गुजराती थी, वे संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे, परन्तु उन्होंने अपने सभी ग्रन्थों का प्रणयन हिन्दी भाषा, आर्यभाषा में किया। उन्होंने सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया था। उन्होंने पाया कि हिन्दी भाषा ही सर्वग्राह्य है। महर्षि के ग्रन्थों में सर्वत्र हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार विषयक विचार प्राप्य हैं। उन्होंने कहा था कि ''एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य बनाए बिना भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति का होना दुष्कर है। सब उन्नतियों का केन्द्र एक्य है। जहाँ, भाषा, भाव और भावना में एकता आ जाती है, वहाँ सागर में नदियों की भाँति सारे दुःख एक-एक करके प्रवेश करने लगते हैं। वे तो यहाँ तक कहते हैं कि अपनी भाषा में वार्तालाप करना ही उत्तम है। स्वदेशियों में बैठकर विदेशी भाषा बोलने लग जाना, भला प्रतीत नहीं होता, प्रत्युत ऐसा करना भद्दा प्रतीत होता है तथा उसमें घमण्ड भी प्रकट होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती हिन्दी के पक्षधर थे। उन्होंने लिखा था कि ''दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं, जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक और अटक से कटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रयोग और प्रचार हो। मैंने आर्यावर्त भर में भाषा का एक्य सम्पादन करने के लिए ही अपने सकल ग्रंथ आर्य भाषा में लिखे और प्रकाशित किये हैं।'' महर्षि ने लिखा था ''जब पाँच वर्ष का लड़का लड़की हो, तब उनको देवनागरी अक्षरों का अभ्यास करना चाहिए। अन्य देशीय भाषाओं का भी अभ्यास कराना उचित है।''

महर्षि ने अपने ग्रन्थों में स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग की शिक्षा दी है। वे स्वधर्म, स्वभाषा, स्वराष्ट्र और स्वसंस्कृति को स्वदेशोन्नति का मूलाधार मानते हैं। वे एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य को देशोन्नति के लिए अनिवार्य मानते हैं। आर्यावर्त की प्रशंसा स्वामी जी ने इस प्रकार की है, ''यह आर्यावर्त देश ऐसा है, जिसके सदृश दूसरा देश भूगोल में नहीं है, वे इसी देश की प्रशंसा करते हैं और आशा करते हैं कि जो पारसमणि पत्थर सुना जाता है वे बातें झूठी हैं, परन्तु आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है, जिससे कि लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की सहिष्णुता सराहनीय थी। उन्हें जब अनूपशहर में एक व्यक्ति ने पान में विष दिया और सर सैयद मोहम्मद मजिस्ट्रेट ने उस विष देने वाले को पकड़ाकर हवालात में बन्द करा दिया तो स्वामी दयानन्द ने उसे छुड़वाते हुए कहा था, ''मैं दुनिया को कैद कराने नहीं, किन्तु कैद से छुड़ाने आया हूँ।''

महर्षि दयानन्द सरस्वती ब्रह्मचर्य की मर्यादा का बहुत अधिक ध्यान रखते थे। एक दिन वे यमुना तट के विश्रान्त घाट पर समाधिस्थ थे। उस समय एक देवी ने श्रद्धा से अपना सिर उनके पाँव पर रख दिया, तब उन्होंने प्रायश्चित रूप में तीन दिन का उपवास किया था। ब्रह्मचर्याश्रम के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है ''ब्रह्मचर्य जो कि सब आश्रमों का मूल है, उसके ठीक-ठीक सुधरने से सब आश्रम सुगम और बिगड़ने से नष्ट हो जाते हैं।'' उन्होंने ब्रह्मचर्य पर बल दिया और युवकों को सम्बोधित करते हुए कहा ''सौम्य युवको! वैसे तो व्यसन सभी बुरे हैं, परन्तु वेश्या सबसे अधिक नाशकारिणी है। इस व्यसन से सुरापान की बान पड़ जाती है और सभ्यवेश, सभ्यभाषा, सभ्याचार आदि सभी गुण नष्ट हो जाते हैं।'' उन्होंने कामवासना से बचने का भी आग्रह किया, ''कामवासना जीतने का यह विधान है कि एकान्त स्थान में न रहे, नाच आदि कभी न देखें।''

महर्षि दयानन्द सरस्वती आदित्य ब्रह्मचारी थे। उन्होंने जालंधर के सरदार विक्रम सिंह की आठ घोड़ों की बग्गी को एक हाथ से रोक दिया था। कोचवान चाबुक फटकारता रहा, पर बग्गी न हिली। जब पीछे घूमकर देखा तो स्वामी जी चक्का पकड़े खड़े थे। यह उनके ब्रह्मचर्य का ही बल था। कर्णवास में स्वामी दयानन्द एक दिन गंगा तट पर उपदेश दे रहे थे। बरेली के राव कर्ण सिंह कुछ हथियार बन्द साथियों के साथ

वहाँ आए और बातचीत करते-करते वे इतने क्रोध में आ गए कि उन्होंने तलवार खींचकर स्वामी जी पर आक्रमण कर दिया। स्वामी जी ने तलवार छीनकर दो टुकड़े कर दिए और राव साहब को पकड़कर कहा, ''मैं तुम्हारे साथ इस समय वह सलूक कर सकता हूँ, जो किसी आततायी के साथ किया जा सकता है, परन्तु मैं संन्यासी हूँ, इसलिए छोड़ देता हूँ, जाओ ईश्वर तुम्हें सुमति देवें।'' ऋषिवर के जीवन में आए अनेक प्रसंग उनकी वीरता के प्रतिपादक हैं। वे असत्य का खण्डन तथा सत्य का प्रतिपादन निर्भीक होकर करते थे। एक बार बरेली में उनके व्याख्यान हो रहे थे। उनके व्याख्यानों में अनेक विदेशी तथा अन्य धर्मानुयायी भी आया करते थे। उनसे कहा गया कि वे ईसाई मत का खण्डन न करें, क्योंकि इससे वहाँ के उच्च राज्य अधिकारी अप्रसन्न होंगे। उस दिन के व्याख्यान में, जबकि वहाँ पर उच्च राज्य अधिकारी भी उपस्थित थे, स्वामी जी ने गरज कर कहा–''लोग कहते हैं कि असत्य का खण्डन न कीजिए, इससे कमिश्नर अप्रसन्न होगा, कलक्टर नाराज होगा, परन्तु चाहे चक्रवर्ती राजा भी क्यों न अप्रसन्न हो, हम तो सत्य ही कहेंगे।'' स्वामी जी ने यहाँ तक कहा है–''यदि लोग हमारी अंगुलियों को बत्तियां बनाकर जला डालें तो भी कोई चिन्ता नहीं। मैं वहाँ जाकर अवश्य सत्योपदेश कहूँगा।'' महर्षि दयानन्द की मान्यता थी कि यदि सत्याग्रह के लिए कारावास भी मिले तो कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए–''सत्य के लिए कारावास कोई लज्जा की बात नहीं है। धर्म के पथ पर आरूढ़ होकर मैं ऐसी बातों से सर्वथा निर्भय हो गया हूँ। प्रतिपक्षी लोग यदि अपने प्रभाव से ऐसा कष्ट दिलायेंगे, तो जहाँ कष्ट सहते हुए मेरे चित्त में शोक की कोई तरंग उत्पन्न न होगी, वहाँ मैं अपने प्रतिपक्षियों की अकल्याण कामना भी कभी नहीं करूँगा।'' महर्षि के सत्य प्रतिपादन में कहीं भी बदले की भावना नहीं थी। वे पूर्णत: पक्षपात रहित थे। उन्होंने लिखा है–''जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वो अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है।'' वे पक्षपात रहित सत्य के ही समर्थक थे और सत्य प्रतिपादन में निर्भीक थे।

कर्णवास में स्वामी जी का शास्त्रार्थ अनूपशहर के पं. हीरा बल्लभ जी के साथ हुआ था। पं. हीरा बल्लभ जी ने बीच में ठाकुर जी का सिंहासन रख दिया, जिस पर शालिग्राम आदि की मूर्तियाँ थीं। उसने प्रतिज्ञा की कि मैं स्वामी जी से इन्हें भोग लगवाकर ही उठूँगा। छ: दिन तक धाराप्रवाह संस्कृत में शास्त्रार्थ होता रहा। सातवें दिन पं. हीरा बल्लभ जी बोले कि जो कुछ स्वामी जी कहते हैं, वह ठीक है और सिंहासन से उठाकर मूर्तियों को गंगा में प्रवाहित कर दिया और सिंहासन पर वेद की प्रतिष्ठा की। महर्षि का दृष्टिकोण संकुचित जातीयता पर आधृत नहीं था, वह तो मानववादी था और यही कारण है कि आर्य समाज के नियम बनाते समय ''संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है'', इस विचार को उन्होंने सम्मिलित किया। उनके सभी ग्रन्थों में प्राणी मात्र के कल्याण की भावना आदर्श रूप में मिलती है। उनकी भाष्य शैली में भी यही स्वर सर्वत्र प्रमुख है। वास्तव में वर्तमान जातीयता का विचार विश्व में शान्ति स्थापित करने में बाधक है। विश्व शान्ति विश्वमैत्री द्वारा ही सम्भव है। वैदिक उद्घोष ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' ही विश्व को एक सूत्र में निबद्ध कर सकता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने हरिद्वार में ''पाखण्ड खण्डिनी पताका'' फहराई थी। एक दिन उन्होंने शयन पूर्व आत्मनिरीक्षण करते हुए पाया कि उनके धर्मप्रचार का जनता पर वह प्रभाव नहीं पड़ रहा है, जो अभीष्ट है। उन्हें इसका कारण अपनी तपस्या में न्यूनता जान पड़ी। तभी से उन्होंने सर्वमेध यज्ञ करके, केवल एक लंगोटी पहनकर गंगा के तट पर विचरना तथा अपनी तपस्या और अपने ज्ञान में वृद्धि करने का प्रण कर लिया। अनेक वर्षों की साधना के पश्चात् उन्हें वह दिव्य शक्ति प्राप्त हुई जिससे उन्होंने वैदिक धर्म का डिण्डिम घोष चहुँ ओर प्रचारित किया। महर्षि ने शिक्षा क्षेत्र में विशेष योगदान दिया। उन्होंने अपने जीवन काल में ही अनेक संस्कृत पाठशालाओं की स्थापना की थी। वे स्त्री शिक्षा के भी अनन्य प्रबल समर्थक थे। उन्होंने स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य धारण और विद्या ग्रहण करने का अधिकार दिलाया। महर्षि ने अनिवार्य शिक्षा के विषय में लिखा है:-''इसमें राजनियम और जाति नियम होना चाहिए कि पाँचवें वर्ष के उपरान्त कोई मनुष्य अपने लड़के लड़कियों को घर में न रख सके। अवश्यमेव उन्हें पाठशाला में भेजे। यदि न भेजे तो वह दण्डित किया जाये।'' महर्षि दयानन्द ने लड़के और लड़कियों के लिए अलग शिक्षणालय खोले जाने की व्यवस्था दी थी। शिक्षा के समय उनकी मान्यता थी कि सबको तुल्य वस्त्र, खानपान,

आसन दिये जावें। चाहे वह राजकुमारी व राजकुमार हों, चाहे दरिद्र की सन्तानें हों, सबको तपस्वी होना चाहिए। आज तो आर्य पद्धति पर आधृत शिक्षणालयों का जाल सा बिछा है। महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा उनके अनुयायियों की शिक्षा नीति पर आधृत देश विदेश में अनेक विश्वविद्यालय तथा कॉलेज चल रहे हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने धर्मप्रचार का कार्य तो किया ही, उन्होंने "गौरक्षा कार्यक्रम" का भी सूत्रपात किया। स्वामी जी ने देखा कि किस प्रकार लोग गौरक्षा की ओर से लापरवाही करते आ रहे हैं। उन्होंने आगरा में गोकृष्यादि रक्षिणी सभा की स्थापना, गौरक्षा के लिए आन्दोलन करने के उद्देश्य से की। भारत देश की उन्नति में गौरक्षा का विशेष महत्व है। अजमेर में एक अंग्रेज कमिश्नर के विदाई समारोह में स्वामी जी ने ललकारते हुए कहा था–'आप जाकर महारानी से कह देना कि यदि गोहत्या इसी प्रकार जारी रही और सरकार हमारी धार्मिक भावनाओं से इसी प्रकार खेलती रही तो १८५७ की क्रान्ति पुनः दुहराई जा सकती है।" ऋषिवर ने लिखा है "जब आर्यों का राज्य था, तब ये महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे।" उन्होंने अपने जीवनकाल में गौशालाओं की स्थापना की। आज भी अनेक गौशालाएं इस दिशा में कार्यरत हैं। आर्यसमाज निरन्तर गौशालाओं की स्थापना की वृद्धि के लिए प्रयत्नशील है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने स्त्रियों के लिए समान अधिकार दिये जाने का प्रावधान किया है। उन्होंने लिखा है "नारी न केवल गृहस्थ जीवन की अपितु मान व सम्मान की आधारशिला है। अतः उसका सुशिक्षित, सभ्य और सुसंस्कृत होना अनिवार्य है।" उन्होंने वैदिक पुत्री पाठशाला की स्थापना करके नारी जाति और शूद्रों को पढ़ने का अधिकार दिया। अपने सुधारवादी आन्दोलनों में विधवा पुनर्विवाह का विधान, बाल विवाह और सती प्रथा का निषेध, दास प्रथा से मुक्ति, गुण कर्म और स्वभाव के आधार पर वर्ण व्यवस्था तथा छुआछूत का विरोध करके एक स्वस्थ एवं समुन्नत सामाजिक व्यवस्था प्रदान की। आज नारी जाति नर के साथ कंधे से कंधा मिलाकर राष्ट्रोत्थान के कार्यों में संलग्न है। वह आर्यसमाज के ही प्रयासों का सुफल है।

स्वामी जी महाराज अजमेर में भिनाय की कोठी में मृत्यु शैया पर लेटे थे। सम्पूर्ण भारत से तथा विदेशों से भी अनेक भक्त उनके दर्शनार्थ वहाँ आते रहते थे। लाहौर के प्रसिद्ध विद्वान् पं. गुरुदत्त विद्यार्थी एम.ए. भी, आर्य समाज लाहौर के प्रतिनिधि के रूप में वहाँ पर पहुँचे थे। स्वामी जी ने बातचीत करके सबको विदा किया और अपनी शैया पर बैठ गए। उन्होंने प्राणायाम किया। प्राणायाम के पश्चात् वेदमंत्रों का पाठ किया। मन्त्रोच्चारण करते समय उनके मुख पर मुस्कराहट थी। गुरुदत्त ने सोचा कि मौत का नाम सुनकर लोग भयभीत होते हैं, काँपते हैं, पर ऋषिवर के मुख पर तो प्रसन्नता की स्फूर्तिदायक आभा है। उन्हें कोई कष्ट नहीं है। वे प्रसन्नवदन परमात्मा की आराधना कर रहे हैं। स्वामी दयानन्द की इस प्रसन्न मुखमुद्रा का गुरुदत्त पर विद्युतीय प्रभाव हुआ। उनक हृदय में जमा नास्तिकता का कूड़ा कर्कट क्षण भर में साफ हो गया। उनका हृदय कमल आस्था, विश्वास और श्रद्धा से प्रस्फुटित हो गया। स्वामी दयानन्द ने एक निःश्वास ली और प्रसन्न वदन बोले "प्रभु आपने अच्छी लीला की, आपकी इच्छा पूर्ण हो।" इन शब्दों के साथ उन्होंने अन्तिम श्वास खींचा और प्राण त्याग दिए। मृत्यु के इस अद्भुत दृश्य ने प्रकट कर दिया कि जो महान् पुरुष ईश्वर विश्वासी होते हैं, जिनके हृदय में परोपकार के भाव भरे रहते हैं, जिनका संसार में किसी से राग-द्वेष नहीं होता, वे इस प्रकार प्रसन्न वदन, मुस्कराते और ईश्वर को स्मरण करते हुए संसार से विदा होते हैं। ३० अक्टूबर १८८३ (संवत् १९४०) की दीपावली के दिन उनका निर्वाण हुआ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती राष्ट्रीय पुनर्जागरण तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान के अग्रदूत थे। उन्होंने भारत की सुप्त, पराधीन जाति की हतन्त्री को झंकृत करके, उन्हें नवस्फूर्ति तथा नवचेतना प्रदान की। सामाजिक कुरीतियों तथा अंधविश्वासों के उन्मूलन तथा स्त्री जाति और दलितों को समान अधिकार दिलाने के लिए सबल प्रयास किया। वेदोद्धारक ऋषिवर की वैज्ञानिक अन्वेषण दृष्टि ने आर्य जाति को अपने व्यवहार में उच्चता, उदात्तता तथा मानवीयता लाने की गुणवत्ता प्रदान की। उनकी स्वराज्य की अवधारणा तथा स्वभाषा प्रवर्तन की भावना ने राष्ट्रोत्थान तथा राष्ट्रीयता की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया। वे हमारे प्रेरणास्रोत तथा वन्दनीय एवं स्मरणीय हैं। उनके निर्वाण दिवस पर, उनकी स्मृति में हमारी विनत श्रद्धांजलि।

पूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
ए/एच-१६, शालीमार बाग, दिल्ली-११००८८
फोन : ०११-२७४७२०१४, २७४७१७७६

देश विदेश में दीपावली पर्व

–रामबिहारी विश्वकर्मा

दीपावली का पर्व 'दीपमालिका, दीपोत्सव एवं दीपावली आदि विभिन्न नामों से प्रचलित त्यौहार है। यह पर्व शरद ऋतु में कृष्णपक्ष की अमावस्या को मनाया जाता है। यों तो हमारे देश में अधिकतर पर्व शुक्लपक्ष में मनाये जाते हैं परन्तु दीपावली का पर्व कृष्णपक्ष की अमावस्या को मनाने की प्रथा है। इस तिथि को जब दीपों का प्रकाश चतुर्दिक प्रज्ज्वलित होता है तो ऐसा लगता है मानो पृथ्वी की ही तरह आसमान ने भी तारों के दीप सजा रखे हों।

दीपावली भारत में ही नहीं अपितु विश्व के जिन-जिन भागों में भारतवंशी पहुंचे हैं, उन सभी स्थानों पर बहुत ही श्रद्धा, भक्ति और पारम्परिक उल्लास के साथ मनाई जाती है। इन देशों में भूटान, बांग्लादेश, श्रीलंका, वर्मा, थाईलैण्ड, सिंगापुर, मलेशिया, हांगकांग, फिजी, फिलीपीन्स, मारीशस, सूरीनाम, कनाडा, ब्रिटेन, अमरीका आदि प्रमुख हैं। इन सभी देशों में एक तथ्य सामान्य रूप से प्रचलित है वह है–घरों को साथ-सुथरा करके श्री लक्ष्मी का पूजन करना।

लक्ष्मी का एक नाम श्री भी है। यजुर्वेद में कहा गया है–'श्रीश्चते लक्ष्मीश्चते सपत्न्यौ।' लेकिन ऋग्वेद में 'श्री' और 'लक्ष्मी' को एक ही अर्थ में इस्तेमाल किया गया है। तैतिरीय उपनिषद में 'श्री' का अर्थ किया गया है–अन्न, जल, गोरस और वस्त्र आदि जैसी समृद्धियां उपलब्ध कराने वाली शक्ति। अथर्ववेद में 'श्री' का अर्थ पृथ्वी किया गया है। वेदों की विभिन्न ऋचाओं में 'श्री' का अर्थ मातृभूमि के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए किया गया है। कहीं-कहीं पर ऋचाओं में 'श्री' का अर्थ 'सौंदर्य' भी मिलता है। गृह्य सूत्र में तेजस्विता और सम्पदा देने वाली शक्ति को 'श्री' कहा गया है। नारायणोपनिषद में 'श्री' को लक्ष्मी का प्रथम नाम माना गया है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि 'श्री' जिन दिव्यात्माओं में निवास करती है, वे 'ज्योतिर्मय' हो जाते हैं।

पौराणिक धर्मग्रन्थों में लक्ष्मी की कल्पना रूप-यौवन से युक्त युवती के रूप में की गई है। जो अष्टकमलदल पर विराजमान है जिसके एक हाथ में कमल, एक हाथ में अमृतघट, एक हाथ में नारियल और एक हाथ में शंख होता है। लक्ष्मी को मूल प्रकृति, अत्यका और प्रधाना आदि नामों से अभिहित किया गया है। इस प्रकार लक्ष्मी के बारे में अनेकानेक विशेषणों का उल्लेख मिलता है।

वर्षाकाल की समाप्ति के बाद शरद ऋतु का आगमन होता है। किसानों के घर धन-धान्य से पूर्ण हो जाते हैं। वर्षा की गंदगी समाप्त हो जाती है, चारों ओर निर्मल पानी और हवा मिलती है। लोगों के मन प्रफुल्लित और आनन्द से भर देती है। पका हुआ अनाज खेतों से खलिहानों और खलिहानों से घरों में पहुंचने लगता है। वर्षाकाल की सभी गन्दगियों को साफ करके घरों की सफाई करने और उसे सजाने का मन में उल्लास हिलोरें लेने लगता है। लोग प्रकाश-उत्सव के लिए तैयार हो जाते हैं। **दीपावली का त्यौहार एक ऐसा पर्व है जिसे देश के सभी भागों में किसी न किसी रूप में मनाया जाता है। राजस्थान की मरुभूमि हो या असम की नदियों की बाढ़ से ग्रस्त समस्त भूमि हो या पर्वतीय भू-भाग हो सभी जगह दीपावली मनाने की प्रथा है।**

कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि राम जब लंका से रावण पर विजय प्राप्त करने के बाद अयोध्या लौटे तो लोगों ने दीप जलाकर उनका स्वागत किया। इसीलिए इस पर्व 'दीपावली' का प्रचलन हुआ। कुछ लोग राजा बलि की शासन-व्यवस्था से इसे जोड़ देते हैं। जनश्रुतियों के अनुसार उनके राज्य में चारों ओर दान, दया, अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्य का सम्मान था। इस प्रकार इस उत्सव के मनाने के बारे में अनेक प्रकार की कहानियों का उल्लेख किया जाता है। महर्षि दयानन्द की निर्वाण तिथि भी दीपावली ही है। दीपावली जिस रूप में भी मनाई जाए, यह सभी के लिए सुख, शांति और समृद्धि का प्रतीक बन कर आती है। वर्ण व्यवस्था के अनुसार इसे वैश्यों का त्यौहार माना जाता है लेकिन सभी वर्णों के लोग मिलजुलकर इसे बड़े ही उल्लास और हर्ष के साथ मनाते हैं और इस तरह का कोई भेदभाव नहीं किया जाता है।

देश के विभिन्न भागों में दीपावली से एक दिन पूर्व नरक चतुर्दशी मनाई जाती है। एक पौराणिक कथा के अनुसार नरकासुर के बंदीगृहों में सोलह हजार युवतियां बंदी थीं। श्रीकृष्ण ने उन सभी युवतियों को बंदीगृह से मुक्त कराया था। उन युवतियों को बंदीगृह से मुक्त कराने के बाद दीप जलाकर खुशियां मनाई गईं। आधुनिक संदर्भ में देखा जाए तो हमारे चारों ओर अनेक प्रकार की गंदगियों, अस्वच्छताओं आदि का नरक फैला हुआ है, उसे दूर करके तत्पश्चात् स्वच्छ वातावरण में हमें दीपावली मनानी चाहिए। इससे दीपावली की सार्थकता और बढ़ जाएगी। अनेक त्योहारों की तरह दीपावली के अवसर पर भी कई कुरीतियों की परम्पराएं चल पड़ी हैं। जैसे कुछ लोग इस अवसर पर जुआ खेलते हैं, इस कुरीति को भी समाज से दूर करने की आवश्यकता है। दीपावली हृदय को भी आलोकित करने का पर्व है दीपावली के पर्व पर हृदय के भीतर भी ज्ञान का, आनन्द का प्रकाश फैलना चाहिए। **–पूर्व निदेशक आकाशवाणी**

दीपोत्सव और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

❑ दिव्या आर्य

दीपोत्सव के पावन पर्व के साथ मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का नाम अभिन्न रूप से जुड़ा है। लंकाधिपति रावण पर विजय प्राप्ति के उपरान्त श्रीराम के अयोध्या आगमन पर अयोध्या नगर की डगर-डगर, हर वीथि और वीथिका में नगरवासियों द्वारा ज्योतित की गयी दीपपंक्तियों से उस महानगरी का कोना-कोना ज्योतित हो उठा होगा। उसी पुनीत अवसर की प्रेरक स्मृति को अपने मानस में सहेजे कोटि-कोटि वेद-धर्म अनुरक्त जन प्रतिवर्ष इस पावन पर्व का सोत्साह पालन करते हैं। जिस मर्यादा पुरुषोत्तम की स्मृति सहस्त्रों वर्षों से विश्व को अन्याय और अनाचार के विरुद्ध कर्मरत होने की प्रेरणा प्रदान कर रही है, उनके श्री चरित्र को महर्षि बाल्मीकि ने अपनी अमर कृति रामायण से अमरत्व प्रदान कर दिया है। तो सन्त तुलसी ने भी उनकी महिमा का गायन अपने महान ग्रन्थ रामचरित मानस में किया है।

इन ग्रन्थों में वर्णित श्रीराम का जीवन आज भी जन-जन का पथ प्रदर्शक है। श्रीराम का जीवन चरित्र आज भी श्रद्धा सहित सुना जाता है। बाल्मीकि ने श्रीराम के चरित्र का अपने शब्दों में अंकन कर अमरत्व पाया है तो सन्त तुलसी ने भी उसी महिमा मण्डित महापुरुष के जीवन वृत्त को अपने ग्रन्थ रामचरितमानस की विषय वस्तु बनाकर विदेशियों की दासता के युग में अपने इस वाक्य से स्वातन्त्र्य का महामन्त्र गुंजाया था कि 'पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं।'

सन्त तुलसीदास ने रामचरितमानस में अनेकों प्रतीकों और कल्पनाओं के माध्यम से श्रीराम के चरित्र को आभामण्डित किया था। उनकी **'मानस'** ने अपने रचनाकाल में जनमानस को धैर्य तो प्रदान किया ही था, इसी ग्रन्थ ने विश्व के अनेक भागों में जाकर बसे लाखों हिन्दू जन को हिन्दुत्व से जोड़े रखने और उनके वैदिक संस्कृति के प्रति अनुरक्त रहने में महती भूमिका निभाई है। श्रीराम के चरित्र का पठन-मनन कर अनेक अहिन्दू मनीषियों को भी हिन्दुत्व की वैचारिक गंगा और वैदिक धर्म के ज्ञान-सागर में आकण्ठ स्नान करने का सुअवसर प्रदान किया था। रहीम और नजीर आदि अहिन्दू मनीषियों की रचनाएं इसी सत्य को आज भी उजागर कर रही हैं।

राम का सम्पूर्ण जीवनवृत्त राष्ट्र-जीवन में एकता और महान वैदिक संस्कृति के शाश्वत सत्य की अभिव्यक्ति करता है। आदर्श पुत्र और आदर्श भ्राता, आदर्श पति और आदर्श मित्र ही नहीं अपितु आदर्श सेनानायक और कुशल प्रशासक के रूप में आज भी श्रीराम की छवि कोटि-कोटि जन के मन में अंकित है। श्रीराम सत्य की रक्षार्थ संघर्ष के पक्षधर थे। जीवन यात्रा के विभिन्न चरणों में जो कुछ भी अनुकरणीय और श्रेयस्कर है, उस सबके श्रीराम सजीव, साकार और जीवन्त प्रतिमान थे।

बाल्यकाल से ही सत्य और धर्म के रक्षण तथा असत्य के उन्मूलन को उन्होंने अपना जीवन दर्शन बनाया था। युवावस्था के प्रारम्भ से ही अधर्म के विरुद्ध संग्राम करने को उन्होंने अपने कर्म कौशल में प्रतिष्ठित किया था। पिता के आदेश से राज्य को त्याग बन जाने में उन्होंने संकोच तो तनिक सा भी अपने मानस पटल पर उभरने ही नहीं दिया था। इस तरह उन्होंने पितृभक्ति का एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया था।

सिद्धान्त की रक्षार्थ सत्ता का त्याग, अन्याय, शोषण, उत्पीड़न और दमन के विरुद्ध संघर्ष तथा राष्ट्र के उपेक्षित जन के उद्धारार्थ सतत प्रयत्न, यही मर्यादा पुरुषोत्तम राम के जीवन चरित्र का महान मन्त्र है। देश उनके काल में भी अनेक खण्डों में विभक्त सा था। उन्होंने अपनी कर्मशक्ति के बल पर राष्ट्र में अखण्डता का मन्त्र फूंका था। **उनका लंका विजय अभियान भी वैदिक संस्कृति के सत्य स्वरूप को विकृत करने वाली एक महाशक्ति के दमन का एक पग था।** आध्यात्मिकता यदि वैदिक संस्कृति का सार तत्व है तो आसुरी प्रवृत्तियों के दमन हेतु शक्ति संचय भी उसका मूल मन्त्र रहा है। श्रीराम ने अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध शर-सन्धान को एक पावन अनुष्ठान के रूप में प्रतिष्ठित किया था।

दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएं

वैदिक संस्कृति और आर्य सभ्यता, जिसे वर्तमान सन्दर्भों में हिन्दुत्व की संज्ञा देना ही समीचीन है, उनके जीवन के हर पक्ष में प्रतिभासित हुआ था। श्रीराम ने वनवासियों और गिरिजनों को अपने हृदय के निर्मल प्रेम की गंगा के शीतल जल से इस तरह से आप्लावित किया था कि सुग्रीव, अंगद, जाम्बवन्त और हनुमान सरीखे अपनी शक्ति को ही विस्मृत कर बैठे निराश और हताश नरपुंगव पौरुषवान सेनानियों के रूप में उभर उठे थे। श्रीराम का प्रेरक चरित्र आज भी हताश-निराश राष्ट्र के उत्थान हेतु एक महान संजीवनी सुधा है। श्रीराम संगठन सूत्र के ऐसे कुशल सूत्रधार थे, जिन्होंने बिछड़ों और पिछड़ों को गले लगाने का मार्ग सहस्त्रों वर्ष पूर्व दिखाया था। वनवासिनी शबरी के बेरों के स्वाद में जीवन में परम आल्हाद की अनुभूति करने वाले श्रीराम का प्रेरक जीवन आज भी हमें यह सन्देश दे रहा है कि हम उन वनवासियों और उपेक्षित तथा शोषित बन्धुओं को सप्रेम गले लगाएं जो उपेक्षित और उत्पीड़ित होते हुए भी हिन्दुत्व की पावन डोर से स्वयं को बांधे हुए हैं। श्रीराम का जीवन इस सत्य का साक्षी है कि धन, धान्य स्वर्ण और सुख तथा वैभव के साधन ही राष्ट्र की जीवन धारा को सतत सशक्त रखने का मूलाधार नहीं हैं, बल्कि साहस, शौर्य और न्याय एवं सत्य सिद्धान्त के लिए संघर्ष ही विजयश्री वरण करने की सामर्थ्य उपजाता है जो तत्व प्रेम के मार्ग को नहीं समझते उन्हें सत्य की शक्ति के रौद्र रूप का दर्शन कराना ही सही राह पर लाने का एकमात्र मार्ग है। 'शठे शाठ्यम् समाचरेत' ही राष्ट्र की एकता को खण्डित करने में संलग्न अपनों और परायों को सद्मार्ग पर लाने का एकमात्र मन्त्र है।

पाश्चात्य विचारधारा के प्रति अनुरक्त अनेक जन भौतिक समृद्धि को ही राष्ट्र की अभिवृति का एकमात्र मार्ग मान बैठे हैं। उनके नेत्रों पर पड़े भ्रम के परदे को हटाकर उन्हें सत्य का दर्शन कराने हेतु श्रीराम का पावन चरित्र एक महान साधन है। जो यह दर्शाता है कि चारों वेदों और षट् दर्शन का प्रकाण्ड पण्डित माना जाने वाला रावण जब अहंकार के वशीभूत आर्य मर्यादाओं के उल्लंघन पर उतर आता है, तो उसे शास्त्र नहीं अपितु शस्त्र की भाषा से ही सत्य का साक्षात कराया जा सकता है।

मर्यादा पुरुषोत्तम के जीवन वृत्त से यह तथ्य उजागर हो जाता है कि धर्म, मर्यादा, सत्य और शील तथा विनय के साथ ही साथ प्रबल पौरुष और पराक्रम का संचय भी आवश्यक है और साधना मात्र नहीं अपितु साधन ही उसका सशक्त और सफल माध्यम होता है। देश के समक्ष आज विकट परिस्थितियां विद्यमान हैं। कश्मीर की केसर क्यारियां आज पुष्पों की सुगन्ध नहीं अपितु राष्ट्रद्रोही तत्वों के जघन्य कृत्यों से संतप्त हैं। रामचरित के उद्गाता गुरु गोविन्दसिंह की कर्मभूमि में भी भ्रमित जन अभी भी अपने षड्यन्त्रों को सफल बनाने के प्रयासों में किसी न किसी सीमा तक संलग्न हैं।

हम दीपोत्सव मना रहे हैं, किन्तु समस्याओं का घटाटोप राष्ट्र के भाग्य गगन को तिमिराच्छन्न सा किए हुए है। विघटन और विखण्डन की शक्तियां अपने प्रभाव मण्डल को सशक्त बनाने के लिए संकीर्णता और साम्प्रदायिकता के हथकण्डे बरतने में पीछे नहीं हैं। सत्य के लिए सिंहासन को त्याग देने वाले श्रीराम के ही देश में सत्ता प्राप्त करने के लिए सिद्धान्तों को सूली पर चढ़ा देने में भी संकोच नहीं बरतने वाले तत्व अहर्निश नित-नए षड्यन्त्र रचने में संलग्न हैं। अन्धकार के बढ़ते तान-वितान को भेदकर समाज के जन-जन में नवचैतन्य का सृजन और विद्यमान समस्याओं से राष्ट्र को उबरने के लिए श्रीराम के मात्र जयगान की नहीं अपितु जयमन्त्र को गुंजायमान करने की आदरभावना है।

जो अतीत था, वह जा चुका है, उसे पुनर्जीवित करना तो सम्भव नहीं है। परन्तु अतीत के अनुभवों को आधार बनाकर हम उन तत्वों की दुरभि सन्धियों को क्षार-क्षार करने में समर्थ हो सकते हैं। ऐसे तत्व भारत को मात्र भोग्यवस्तु मानते हैं, वन्दना का भाव नहीं। आओ दीपोत्सव की इस पावन बेला में संकल्प ग्रहण करें कि हम हर भारतीय के हृदय में आशा का एक दीप जलाएंगे और उस भारत भूमि के प्रति अनुरक्ति का भाव जगाएंगे, जिसकी महिमा श्रीराम ने अपने इन शब्दों में व्यक्त की थी :-

अपि स्वर्णमयी लंका, लक्ष्मण न मे रोच्यते
जननी जन्मभूमिश्च, स्वर्गादपि गरीयसी।

०-०-०

(वेद मंदिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम, दिल्ली)

आर्यसमाज और देव दयानन्द के स्वप्न

❑ दयाराम पोद्दार

बहुत से लोगों का कहना/मानना है कि वर्तमान समय में आर्यसमाज की आवश्यकता ही नहीं है क्योंकि आर्य समाज के सभी कार्यक्रमों/विचारों को या तो हिन्दू समाज ने ग्रहण कर लिया है या (भारत) सरकार ने उसे अपने कार्यों/संविधान में शामिल कर लिया है अत: आर्य समाज के संगठन को विघटित कर दिया जाना चाहिये। उदाहरण के रूप में वे कहते हैं कि आज नारी शिक्षा, विधवा विवाह, शुद्धि (परावर्त्तन/घर वापसी) आदि सुधारवादी कार्यों का कोई विरोध नहीं है। इसी प्रकार हमारे संविधान/कानून द्वारा बाल विवाह, अस्पृश्यता आदि पर कानूनी रोक है अत: वर्तमान समय में आर्यसमाज की प्रासंगिकता कुछ भी नहीं है। कुछ आलोचक इसी सन्दर्भ में यह भी याद कराते हैं कि जिस प्रकार महात्मा गाँधी ने आजादी के बाद कांग्रेस को समाप्त करने का परामर्श दिया था। क्योंकि भारत को आजादी मिलने के साथ ही कांग्रेस का लक्ष्य भी पूर्ण हो गया था उसी प्रकार आर्यसमाज को भी समाप्त कर देना चाहिये। इसी सन्दर्भ में कुछ लोगों का कहना है कि आज के आर्यसमाजों में पूर्व की तरह सक्रियता/उत्साह आदि का भी पूर्ण अभाव है, अत: आर्यसमाज को समाप्त कर दिया जाना चाहिये या उसे अपने आप मरने के लिये छोड़ दिया जाना चाहिये। उपर्युक्त या ऐसे ही तर्कों के आधार पर अब विचारणीय मुद्दा यह है कि क्या परिवर्तित परिस्थितियों के परिवेश में वास्तव में आज आर्य समाज की आवश्यकता है या नहीं?

इस पर गम्भीर विचार करने पर मुझे ऐसा लगता है कि उपर्युक्त सभी तर्कों से मैं स्वयं को असहमत पाता हूं, क्योंकि प्रश्न यह उठता है कि क्या उपर्युक्त या अन्य सभी कार्य क्या वास्तव में आर्यसमाज के मूल/प्रमुख कार्यक्रम हैं या थे। तब हम इस निष्कर्ष पर सहज ही पहुंच जायेंगे कि नारी शिक्षा, अस्पृश्यता, परावर्त्तन आदि की समस्यायें तो आर्यसमाज के कार्यों की मूल समस्यायें हैं ही नहीं। ये सभी या इससे मिलते-जुलते सुधारवादी कार्यों को तो समसामयिक समस्याओं के रूप में गिना जा सकता है जिसके बिना सुषुप्त समाज में नवजीवन का संचार नहीं किया जा सकता था। प्रश्न यह भी है कि क्या आर्यसमाज की स्थापना भी उपर्युक्त कार्यों को दृष्टि में रख कर ही की गयी थी? यदि नहीं, तो आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य क्या था? विचार करने पर किसी भी संस्था/आन्दोलन का लक्ष्य तो उस संस्था के नियम/उद्देश्य से जाना जा सकता है जब हम ऐसा समझते हैं तो हमारा ध्यान आर्यसमाज के दस नियमों की ओर जाना चाहिये जिसमें एक मनुष्य का अपने और दूसरों के साथ-साथ ईश्वर के प्रति क्या-क्या कर्त्तव्य हैं, यह उन नियमों में वर्णित किया गया है। आर्यसमाज के दस नियम अपरिवर्तनीय हैं और उन नियमों का कार्यान्वयन सभी समयों में अपने-अपने युग की परम आवश्यकतायें हैं जिसकी पूर्ति कभी भी किसी भी समय में पूर्ण नहीं हो सकती है अत: आर्यसमाज की प्रासंगिकता/आवश्यकता न केवल अभी है बल्कि भविष्य में भी सभी समयों में बनी रहेगी। अत: आर्य समाज को कांग्रेस की तरह समाप्त करने का परामर्श सही नहीं है।

आर्यसमाज के संस्थापक का आर्यसमाज को स्थापित करने का मूल लक्ष्य सृष्टि के आदि में सबसे पुराने ग्रन्थ वेद की सार्वभौमिक शिक्षा का प्रचार व प्रसार करना था। उनका नारा था कि वेदों की ओर लौटो। आर्यसमाज के इस परम धर्म का पालन/पोषण करने में मेरे विचार में आर्य समाज अब तक सफल नहीं हुआ है। इसके क्या कारण हैं और इसका समाधान क्या है, यह एक पृथक् प्रश्न है जिस पर आर्य समाज से जुड़े हुये लोगों को पर्याप्त चिन्तन करना होगा। अब तक या वर्तमान की सम-सामयिक समस्यायें आर्यसमाज का प्रमुख कार्य/साध्य नहीं थे अत: उन समसामयिक समस्याओं की पूर्णता से सैद्धान्तिक रूप से सहमत होने पर भी आर्यसमाज का लक्ष्य व्यवहार में समाप्त नहीं होता है। अत: आर्यसमाज के लक्ष्य/साध्य की पूर्ति के लिए आर्य समाज की आवश्यकता न केवल अभी भी बनी हुई है बल्कि सभी समयों में बनी रहेगी। अत: आर्यसमाज को समाप्त करने का परामर्श मान्य नहीं है।

यहाँ मैं एक प्रश्न और उठाना चाहता हूँ कि पूर्व और अभी भी समसामयिक तात्कालिक समस्याओं की पूर्ति अभी भी पूर्ण रूप से नहीं हुई है। संविधान में प्रावधान होने के बावजूद भी क्या अस्पृश्यता, जन्मना जातिवाद इत्यादि समस्याओं का क्या पूर्णरूप से समाधान हो गया है? यह ठीक है कि नारीशिक्षा इत्यादि का हिन्दू समाज में विरोध कम हुआ है पर क्या आर्यसमाज का

लक्ष्य केवल हिन्दू समाज तक ही सीमित था? यदि नहीं तो इस भूतल में जब तक तात्कालिक समसामयिक समस्यायें बनी रहेंगी तब तक आर्यसमाज जैसे सुधारवादी संगठनों की आवश्यकता बनी रहेगी। आज समाज में भ्रूण हत्या के कारण लैंगिक असमानता, जन्मना ऊंच-नीच की भावना, गुरुडम, पाखण्ड और अन्धविश्वास के साथ-साथ मूर्तिपूजा आदि का प्रचार-प्रसार आदि अत्यन्त तीव्रता से बढ़ रहा है जो वेद प्रतिपादित शिक्षा को न मानने/जानने का कुपरिणाम है। खेद है कि आज आर्य समाज भी वर्तमान शिक्षा के प्रचार-प्रसार के रूप में पब्लिक स्कूल/अनाथालय/अस्पताल/आश्रम आदि चलाने और भाड़े की राशि का उपयोग करनेवालों या विवाह करानेवाली संस्था का संगठन मात्र रह गया है। आज आर्यसमाज का प्रमुखतम कार्य वेदों का प्रचार ही आर्यसमाज में सबसे उपेक्षित कार्यक्रम है जिसकी नींव पर आर्यसमाज का संगठन खड़ा हुआ है। अतः आज आर्यसमाज से जुड़े हुये लोग केवल रविवार को कुछ समय के लिये साप्ताहिक अधिवेशन (सत्संग) में जाना या अपने घरों में नित्य या समय-समय पर यज्ञ करने को ही आर्यसमाज का प्रमुख कार्य समझ रहे हैं। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न आर्यसमाजें वार्षिक उत्सव कर या आलीशान अट्टालिका का निर्माण कर अपनी आर्थिक सम्पन्नता का परिचय दे रही हैं पर आर्यसमाज का प्रमुख कार्य अभी भी अधूरा है। आर्यसमाज के सामने सबसे बड़ी समस्या है कि वेदों का उद्धार कौन करेगा? सम्पूर्ण मानव समाज के बड़े से लेकर छोटे स्तर तक सभी लोगों में वेदों में प्रतिपादित शिक्षा का जब तक मनसा वाचा कर्मणा प्रचार और व्यवहार नहीं होगा तब तक अभी और सब समय आर्यसमाज की आवश्यकता बनी रहेगी। अतः आर्यसमाज को समाप्त करने या उसे अपनी मौत आप मर जाने का परामर्श नादानी के साथ-साथ मूर्खता से परिपूर्ण सुझाव है, जिसे आर्य समाज के लोगों को प्रथम दृष्ट्या अस्वीकार कर अपनी योग्यता के अनुरूप ऋषि ऋण से

(शेष पृष्ठ ४२ पर)

आर्यसमाज बिलासपुर का वेद प्रचार महोत्सव

परमात्मा की अमृतवाणी वेद के पावन संदेशों को जन-जन तक पहुंचाकर समाज में नई चेतना एवं जागरूकता लाने के उद्देश्य से आर्य समाज बिलासपुर (छ.ग.) द्वारा समाज के वरिष्ठ सदस्य स्व. श्री रामलाल जी साहू, स्व. श्री साहिब राम जी बत्रा एवं स्व. श्रीमती कृष्णा देवी सखूजा की पुण्य स्मृति में श्रावणी से जन्माष्टमी तक बिलासपुर जिले के विभिन्न अंचलों में यज्ञ-हवन, भजन एवं सत्संग का कार्यक्रम आयोजित किया गया। समापन समारोह के कार्यक्रम का सफलता पूर्वक संचालन समाज के मंत्री श्री सुधीर कुमार आर्य एवं आचार्य श्री भरत कुमार आर्य द्वारा किया गया।

आर्य वन में योग शिविर

आर्यवन। पूज्य स्वा. सत्यपति जी की अध्यक्षता में वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्य वन में कार्तिक शु. ३ से कार्तिक शुक्ल ८, वि.सं. २०६४ (१३ से १८ नवम्बर २००७) तक ६ दिन के योग प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें माताएँ भी भाग ले सकेंगी। शिविरार्थी १२ नवम्बर को सायं ४ बजे तक शिविर स्थल पर पहुंच जावें

जनज्ञान के सदस्यों से

जनज्ञान का वार्षिक शुल्क समाप्ति का पत्र मिलते ही शीघ्र वार्षिक शुल्क एक सौ रुपये भेजने का यत्न करें तथा पत्र के साथ संलग्न कार्ड पर उत्तर भी दें।

डाक व्यय बढ़ जाने से वार्षिक शुल्क की वी.पी. भेजने में अब २५ रुपये लगते हैं। अतः मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट अथवा केवल दिल्ली के चैक द्वारा "जनज्ञान" के नाम शुल्क भेजें। **दिल्ली से बाहर के चैक पर बैंक चार्ज लगभग ४० रुपये व्यर्थ पड़ जाता है।**

पत्र व्यवहार में अपना सदस्य नं. ..... अवश्य लिखें तथा कार्ड पर उत्तर भी अवश्य ही देने की कृपा करें। हमारे यहां से भेजे पत्रों में सदस्य नं.... आपके पते के साथ लिखा होता है। धन्यवाद

–सम्पादक

जन-जन की भाषा है हिन्दी, भारत माता के मस्तक की बिन्दी

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है। हिन्दी का प्रचार प्रसार करना हम सभी का दायित्व है। अतः आप अपने सभी लेखन कार्य, पत्र तथा निमन्त्रण पत्र, अपने हस्ताक्षर आदि देवनागरी लिपि में ही लिखने का निर्णय करें। –संपादक

महर्षि दयानन्द प्रदत्त प्रकाशस्तम्भ : सत्यार्थप्रकाश–आधुनिक सन्दर्भ में

–कुमारी कंचन गुप्ता एम.ए. (संस्कृत)

यदि हम अपने समय साहित्य पर दृष्टिपात करें, तो उसमें वैविध्य दृष्टिगोचर होता है। जहां एक प्रकार का साहित्य ऐतिहासिक कोटि का है, जिसमें तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक आदि विविध परिस्थितियों का वर्णन किया गया है तथा जो किसी व्यक्ति विशेष यथा राजा अथवा महापुरुष आदि को लक्ष्य करके रचा गया है। अथवा किसी समाज विशेष की कुरीतियों के परिमार्जन को लक्ष्य में रख कर भी साहित्य रचना की गई है। इस के ही साथ दूसरा ऐसा साहित्य भी मिलता है, जो मानव जीवन के व्यक्तिगत एवं सामाजिक सभी पहलुओं को दृष्टि में रख कर रचा गया है। शब्दान्तर में, जो साहित्य व्यक्ति के धर्म और सदाचार का वर्णन तो करता ही है, उसके साथ ही साथ देश के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक निर्माण को भी महत्व प्रदान करता है। इस प्रकार के साहित्य को हम मानवशास्त्र अथवा धर्मशास्त्र की संज्ञा दे सकते हैं।

जहां हमें सभी प्रकार का साहित्य प्राप्त होता है, वहां मानवशास्त्र के भी अतिप्राचीन और अर्वाचीन दोनों ही रूप उपलब्ध होते हैं। **मनुस्मृति धर्मशास्त्र का प्राचीन साहित्य है, तो इसी का आधुनिकता में ढला, अर्वाचीन रूप है सत्यार्थप्रकाश। मानवशास्त्र अथवा धर्मशास्त्र किन्हीं विशेष परिस्थितियों और सीमाओं में बद्ध न होकर सार्वकालिक साहित्य होता है,** यही कारण है कि सत्यार्थप्रकाश जहां अपनी सामयिक सामाजिक, धार्मिक व राजनैतिक कुरीतियों का महत्वपूर्ण समाधान किए हुए है, वहां यह मानव के अपने, ईश्वर, धर्म, समाज व राष्ट्र के प्रति सभी कर्तव्यों का वर्णन करते हुए एक आदर्श आचरण प्रस्तुत करता है। मानव-जीवन की प्रत्येक समस्या का समाधान उसमें उपलब्ध है।

वर्तमान परिस्थितियों में जब हम सत्यार्थप्रकाश का उपरोक्त दृष्टि से मूल्यांकन करते हैं, तो यही निष्कर्ष निकलता है कि सवा सौ वर्ष पूर्व यह ग्रन्थ अपनी जिस महती उपयोगिता को धारण किये हुए था, आज की बदली परिस्थितियों में भी अपनी उसी उपयोगिता को अक्षुण्ण बनाये हुए है। अथवा यदि यह कहें कि **आज के समय में सत्यार्थप्रकाश की उपयोगिता तदपेक्षया अधिक है तो अत्युक्ति न होगी। दूसरे शब्दों में, इस ग्रंथ में वर्णित तथ्यों को हम सवा सौ वर्ष पुराना कहकर उपेक्षित नहीं कर सकते। उन तथ्यों को आचरण में लाकर एक आदर्श मानव, आदर्श समाज, आदर्श राष्ट्र और एक आदर्श विश्व का भी निर्माण कर सकते हैं।** इस परिप्रेक्ष्य में, यहां सत्यार्थप्रकाश के कुछेक तथ्यों को ही लेकर विचार करते हैं–

सर्वप्रथम 'धर्म' शब्द को ही लेते हैं। आज के इस वैज्ञानिक युग में 'धर्म' कुछ दकियानूसी विचारों का ही द्योतक रह गया है। आज की युवा पीढ़ी तो धर्म के नाम मात्र से ही चिढ़ जाती है। इसका भी एक मनोवैज्ञानिक कारण है। क्योंकि धर्म के श्रवणमात्र से ही एकाएक उनके सम्मुख, धर्म अनेकानेक प्रचलित सम्प्रदायों, उनके परस्पर विरोधी सिद्धान्तों और विचारों के मतभेदों के फलस्वरूप उनमें हो रहे झगड़ों का मूर्त रूप धारण किये प्रकट हो जाता है। वास्तव में वे यह नहीं समझ पाते कि धर्म विचारों की इस भिन्नता का नाम नहीं है, जो हमें सभी सम्प्रदायों के पूजापाठ के विविध ढंगों और उनके परस्पर विरोधी सिद्धान्तों में दृष्टिगोचर होता है। धर्म का प्रधान व मुख्यतम रूप जो उनकी दृष्टि से ओझल हुआ पड़ा है, वह है आचार। अतएव **मनुष्य के व्यवहार के जो करणीय कर्त्तव्य हैं–लोकाचार के अनुकूल और आत्मा को तुष्टि प्रदान करने वाले जो स्वाभाविक कार्य हैं, उन्हें ही धर्म कहते हैं।** महर्षि मनु के शब्दों में, ''आचारःपरमोधर्मः'' तथा ''स्वस्य च प्रियमात्मनः'' किसी भी स्थान, समय अथवा व्यक्ति भेद से भिन्न नहीं हो सकता, आचार की श्रेष्ठता तो सबकी दृष्टि में एक सी ही है।

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में ही धर्माधर्म की विवेचना करते हुए लिखा है, ''जो पक्षपात रहित न्याय रूप आचार है, उसी का नाम धर्म और इससे विपरीत जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण, सत्य का त्याग और असत्य का ग्रहणरूप कर्म है, उसी को अधर्म कहते हैं।'' कोई भी मनुष्य यदि परिवार अथवा समाज मे बिना अपने पराये के भेदभाव के सम (उचित) व्यवहार करता है, सत्य अर्थात् सच्चाई, परोपकार, करुणा, दया, दानादि की भावना से कार्य करता है और झूठ, चोरी, रिश्वत, दुर्व्यवहार आदि दुष्कर्मों (असत्य)

का त्याग करता है तो उसकी आत्मा स्वभावतः ही सन्तुष्ट रहती है और उसके यही कार्य लोकापचार के अनुकूल एवं सदाचरण कहलाते हैं। इस प्रकार के व्यवहार के औचित्य से आज की युवा पीढ़ी भी इन्कार नहीं कर सकती, इसी का नाम धर्म है। इसके अतिरिक्त धर्म कुछ अन्य आडम्बर नहीं है। यदि स्वामी जी की 'धर्म' की इस उपरोक्त परिभाषा को हृदयंगम कर लिया जाये, तो आज पाई जाने वाली धर्म के प्रति घृणा व भ्रान्ति की भावना का उन्मूलन हो सकता है। इसी धर्म की स्थापना करते हुए ही **स्वामी जी ने किसी व्यक्ति विशेष अथवा सम्प्रदाय विशेष को धर्माधर्म के ज्ञान के लिए उत्तरदायित्व नहीं सौंपा। उन्होंने पक्षपातरहित और ईश्वरीय ज्ञान वेद को ही धर्मज्ञान का स्रोत माना है। सत्यार्थप्रकाश के शब्दों में ''धर्माधर्म का निश्चय बिना वेद के ठीक-ठीक नहीं होता।''**

इसके पश्चात् हम शिक्षा के क्षेत्र को लेते हैं, स्वामीजी द्वारा सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में वर्णित शिक्षा का प्रकार व उसकी पद्धति एकदम विज्ञान-सम्मत है। इस पद्धति के द्वारा आधुनिक जीवन की अनेकानेक चारित्रिक व सामाजिक विकृतियों को सुधारा जा सकता है। उन सबका तो यहां वर्णन नहीं किया जा सकता, उनमें से एक दो बातों को ही लेते हैं।

हम देखते हैं कि हमारी सरकार शिक्षा के महत्व को समझते हुए उसके प्रचार-प्रसार के अनेकों ढंग अपनाती है। कभी प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम लागू किया जा रहा है, तो कभी कुछ। इतना सब प्रयत्न होने के बावजूद भी शिक्षा का महत्व समझा नहीं जाता। **महर्षि दयानन्द ने १२५ साल पूर्व ही शिक्षा का महत्व जान लिया था। 'स्त्रीशूद्रौ नाधीयाताम्' की वृत्ति धारण करने वाले तत्कालीन समाज में भी उन्होंने सभी लड़के-लड़कियों के लिए शिक्षा आवश्यक बताते हुए सत्यार्थप्रकाश में लिखा था कि 'राजनियम और जाति नियम होना चाहिए कि पांचवे अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सके। पाठशाला में अवश्य भेज देवें, जो न भेजे वह दण्डनीय हो।''** यद्यपि यह सत्य है कि आज भी हमारी सरकार ने पांचवें वर्ष में विद्यालय प्रवेश आवश्यक माना है, परन्तु ऐसा कोई कानून नियम नहीं है। यदि सत्यार्थप्रकाश के कथनानुसार इस नियम का उल्लंघनकर्ता दण्ड-भागी हो तो ग्रामों और पिछड़े क्षेत्रों में अनेकों बच्चे अनपढ़ न दिखाई दें। अनपढ़ लोग तो आज भी शिक्षा का महत्व नहीं समझते। कितनी आधुनिकता और दूरदर्शिता है सत्यार्थप्रकाश के इस उपरोक्त कथन में। स्वामी जी ने इस वाक्य में जो 'घर में न रख सकें' इन शब्दों का प्रयोग किया है, इनसे गुरुकुलीय शिक्षा-पद्धति का निर्देश मिलता है। इस पद्धति का तो इस भौतिक चकाचौंध के युग में तो अपना विशिष्ट महत्व है, जिसके द्वारा आज का विद्यार्थी मात्र कागजी डिग्रियों का उद्देश्य न रख कर यथार्थ रूप में विद्याग्रहण कर सकता है।

इसके साथ ही हम तृतीय समुल्लास के प्रारम्भ की महत्वपूर्ण पंक्तियों पर कुछ विचार करते हैं। स्वामी जी ने लिखा है, ''सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभाव रूप आभूषणों का धारण कराना माता-पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने, चांदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नादि से युक्त आभूषणों के धारण करने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं हो सकता। क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है।''

यदि प्रारम्भ से ही माता-पिता अपने बच्चों को शिक्षा तथा विद्या के महत्व से अवगत कराते रहें तथा शुभ गुणों और कार्यों में उनकी रुचि उत्पन्न करते रहें तभी उनका शारीरिक और आत्मिक अलंकरण सही अर्थों में हो सकता है, क्योंकि आभूषणों आदि के धारण करने से भले ही बाह्य सौन्दर्य भासित हो परन्तु इनसे तो आत्मिक और चारित्रिक अधःपतन ही होता है। वास्तविक शोभा तो विद्याग्रहण और श्रेष्ठ कर्मों को करने से ही होती है। यहां यह जानना आवश्यक है कि आभूषणों से तात्पर्य मात्र सोने, चांदी, रत्नादि के आभूषण धारण करने से ही नहीं, अपितु फैशनवृत्ति (अपने शरीर को ही सजाने-संवारने की वृत्ति) से है। क्योंकि सभी प्रकार के फैशनों का परिणाम देहाभिमान और बाह्य विषयों में आसक्ति आदि के अतिरिक्त कुछ नहीं। **आज विद्यार्थियों की विद्यालयों-महाविद्यालयों में जाते हुए भी शिक्षा ग्रहण के प्रति उदासीनता और शारीरिक सजावट के प्रति प्रवृत्ति के परिणाम स्वरूप ही तो चरित्रविहीनता, दुराचरण, शिक्षण-संस्थाओं में अव्यवस्था, राष्ट्रीय प्रेम का अभाव, कर्त्तव्य पराङ्मुखता आदि निरन्तर बढ़ते जा रहे हैं।** मध्याह्न समय के सिनेमा घर तो अधिकांशतः विद्यार्थियों से ही भरे होते हैं। यदि सत्यार्थप्रकाश

के सारगर्भित कथनानुसार प्रारम्भ से ही बच्चे विद्या, शिक्षा व शुभकर्म रूप आभूषणों को ही अपने वास्तविक आभूषण समझने लगें तो आज के इन भयंकर परिणामों से बचा जा सकता है।

शिक्षाक्षेत्र को यहीं छोड़ हम किंचित् सत्यार्थप्रकाश के सामाजिक दृष्टिकोण पर विचार करते हैं। सामाजिक क्षेत्र के मुख्य पक्ष जाति-पाति की समस्या को ही लेते हैं। कहने के लिए तो हमारी सरकार भी जात-पांत उन्मूलन में काफी प्रयत्नशील है इसी उद्देश्य को लेकर महात्मा गांधी ने भी अनेकों प्रयत्न किये और शूद्रों को हरिजन नामक एक पृथक् वर्ग की उपाधि प्रदान कर दी। **गांधीजी का अस्मपृश्यता उन्मूलन सम्बन्धी प्रयत्न तो अवश्य सराहनीय है, परन्तु हमें यह भूलना नहीं चाहिए कि 'हरिजन' नामकरण देकर उन्होंने निम्नवर्ग को उच्च वर्ग सी समानता प्रदान न करके नाममात्र का ही परिवर्तन किया।** समस्या तो लगभग वही रही। और महात्मा गांधी को ही आधार बना कर हरिजन, वनवासी तथा अल्पसंख्यकों के लिए राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक सभी क्षेत्रों में विशेष सुविधाओं की घोषणा करके भारत सरकार भी इस जात-पांत को बढ़ावा ही दे रही है। शासन यह भूलता है कि महात्मा गांधी से भी लगभग एक शती पूर्व, एक श्रेष्ठ समाज को लक्ष्य में रखने वाले, **युग पुरुष महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में इस समस्या का सुन्दर समाधान प्रस्तुत किया था।** जाति-पाँति रूप वर्ण व्यवस्था का इतने सुन्दर ढंग से वर्णन किया गया है कि इससे जहां एक ओर छुआछूत की महती समस्या का समाधान मिलता है, वहां दूसरी ओर प्रत्येक व्यक्ति की योग्यता का उचित लाभ प्राप्त करने वाले श्रेष्ठ समाज का आदर्श प्रस्तुत होता है।

इस वर्ण व्यवस्था का आधार जन्म नहीं जर्म वैविध्य है। ''जन्मना जायते शूद्रः'' मनु के इस वचनानुसार तो उत्पन्न होते ही संस्कारों व शुभ कर्मों के अभाव में तो सभी एक सदृश शूद्र ही होते हैं, पश्चात् जो जैसा कर्म करता है तदनुसार ब्राह्मणादि श्रेणियों को ग्रहण कर लेता है। इसीलिए–

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्रह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।।

मनुस्मृति के वचन को उद्धृत करते हुए स्वामीजी ने कहा कि शूद्र, ब्राह्मण और ब्राह्मण, शूद्र तक बन सकता है। कोई भी ब्राह्मण दुष्कर्म करके अध्यापन रूप स्वकर्तव्य को त्याग कर ब्राह्मणत्व को स्थिर नहीं रख सकता। इसी प्रकार प्रजापालनादि की योग्यता के बिना क्षत्रियत्व को और धनोपार्जन के गुण से विहीन वैश्यत्व को धारण नहीं कर सकता। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन सब की योग्यता से रहित जो मानव है, उसका भी उचित उपयोग लेना आवश्यक है। इसीलिए उससे इन तीन वर्णों की सेवा का उचित कार्य लेने की व्यवस्था की जिससे उच्चवर्गों के कार्यों में सहयोग प्राप्त हो और एक श्रेष्ठ समाज और उस श्रेष्ठ समाज से श्रेष्ठ राष्ट्र का निर्माण हो सके। तथा इस प्रकार के मनुष्य को शूद्र वर्ण की संज्ञा दी गई। सत्यार्थप्रकाश के शब्दों में जिस पुरुष में ''जिस-जिस वर्ण के गुण कर्म हों उस वर्ण का अधिकार देना। ऐसी व्यवस्था रखने से सब मनुष्य उन्नतिशील होते हैं क्योंकि उत्तम वर्णों को भय होगा कि जो हमारी सन्तान मूर्खत्वादि दोषयुक्त है तो शूद्र हो जायेंगे और सन्तान भी डरते रहेंगे कि जो हम उत्तम चाल चलन और विद्यायुक्त न होंगे तो शूद्र होना पड़ेगा और नीच वर्णों को उत्तम वर्णस्थ होने के लिए उत्साह बढ़ेगा।'' इसके पश्चात् ब्राह्मणादि के अधिकारों का वर्णन कर शूद्रों का अधिकार लिखते हुए स्वामी जी कहते हैं ''शूद्रों को सेवा का अधिकार इसलिए है कि वह विद्यारहित होने से विज्ञान सम्बन्धी का कुछ भी नहीं कर सकता किन्तु शरीर के काम सब कर सकते हैं।''

सत्यार्थप्रकाश की इस व्यवस्था के अनुरूप ही **यदि प्रत्येक योग्यतानुसार अपने अधिकारों का चयन करे तो देश जाति का कितना उपकार हो जाय।** आज देखते हैं कि प्रायः सभी अध्यापक वणिक् वृत्ति धारण किये हुए हैं, परिणामतः विद्या के क्षेत्र में उन्नति नहीं हो पाती। क्योंकि अध्यापन और धनोपार्जन के लक्ष्यों में सामंजस्य नहीं। अध्यापन कार्य ब्राह्मण का है तो वणिक् वृत्ति वैश्य का कार्य है। उपरोक्त आदर्श वर्ण-व्यवस्था में तो निम्न और उच्च का छुआछूत और अस्पृश्यता का तो प्रश्न ही नहीं रह जाता यह तो प्रत्येक व्यक्ति की योग्यतानुसार समाज का विभाजन है।

इस प्रकार यहां कुछ अंशों को लेकर ही आधुनिक सन्दर्भ में उनकी उपयोगिता का वर्णन किया गया है। **सत्यार्थप्रकाश तो ऐसे अनगिनत बहुमूल्य रत्नों का आगार है, जिनके ग्रहण से आधुनिक युग की अनेकों जटिल समस्याओं को सुलझा कर प्रत्येक जाति व समाज ऐश्वर्य सम्पन्न बन सकता है।** ०-०-०

असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय

❐ बाबा रामदेव, योगाचार्य

बाबा रामदेव, देव दयानन्द का अनुयायी होने में गौरव का अनुभव तो करते ही हैं, साथ ही 'लौटो वेदों की ओर' के महर्षि के आह्वान पर ध्यान देकर उनके सपनों का भारत बनाने की दिशा में भी सतत साधनारत हैं। योग के प्रचार-प्रसार का उनका महान अभियान-स्वदेश में ही नहीं विदेशों में भी लोकप्रिय है। योगाचार्य बाबा रामदेव के सपनों का भारत क्या है, कैसा है और उस लक्ष्य की सिद्धि के क्या हैं सूत्र–इस लेख में पढ़िए और राष्ट्र के प्रति मनसा वाचा कर्मणा समर्पित होकर जब होगा चिंतन मनन तो ही हो सकेगा सत्य के प्रकाशित-आलोकित पथ का दर्शन। हि.टा. से साभार प्रस्तुत है, बाबा रामदेव के पथ-प्रदर्शक आह्वान का आर्यभाषा (हिन्दी) में यह रूपान्तरण–सं.

स्वतन्त्रता के 60 वर्ष के उपरान्त मेरा भारत ऐसा है, 'जो एक ओर यू.एस. (अमरीका) एवं यू.के. (ब्रिटेन) से भी समृद्ध, जापान से भी अधिक राष्ट्रभक्त एवं तकनीकी ज्ञान से समृद्ध जन तथा चीन से भी अधिक महान जन का निवासस्थान है तो दूसरी ओर बंगलादेश से बदतर भूख, निर्धनता एवं बेरोजगारी का संत्रास भोग रहे बेबस नागरिक भी यहां रहते हैं। एक ओर हम क्रिकेट के विश्व विजेता हैं और सूचना प्रौद्योगिकी (आई.टी.) के पुरोधा हैं तो दूसरी ओर विश्व के भ्रष्ट देशों के सिरमौर, अपराध, जातिवाद, आतंकवाद से हमारा समाज अभिशप्त है। भारत में महिलाएं दहेज एवं कन्या भ्रूण जैसे अपराधों की शिकार हैं। आखिर कितने लम्बे समय तक हम ऐसे अपराधों में संलिप्त और संवेदना रहित रह सकेंगे? हमारे यहां ऐसे मुट्ठी भर लोग भी हैं, जो विश्व विजय का स्वप्न संजोए हैं। दूसरी ओर घोर निराशावादी, अविश्वास एवं आत्मग्लानि से ग्रस्त भीरु, काहिल और दुर्बल जन भी यहां हैं, जो दमन, अन्याय और अकर्म के विरुद्ध खड़े होने के साहस से रहित हैं।

मैं अपने हृदय में एक ऐसे भारत का स्वप्न इन विषम परिस्थितियों में भी अपने मानस में संजोए हुए हूं कि मुझे भारत को विश्व में एक महाशक्ति बनाना है, एक ऐसा भारत, जो आर्थिक, आध्यात्मिक दृष्टि से समृद्ध और अग्रणी देश हो और हम विश्व का नेतृत्व करने का सामर्थ्य एवं गौरव प्राप्त कर सकें। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु मेरे हृदय में एक सप्त सूत्रीय संकल्पना है।

१. हमारे देश में संसाधन, काम एवं भूमि भी कम होती जा रही है एवं जनसंख्या तीव्रगति से बढ़ती जा रही है। अतएव एक नया सामाजिक जागृति अभियान छेड़ना होगा, जिसके तहत अधिक संतान पैदा करने वालों को हेय दृष्टि से देखा जाना अपेक्षित होगा। छोटे परिवारों के लाभों से लोगों को अवगत कराना होगा। सरकार और गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) को उन लोगों को पुरस्कृत करना चाहिए, जिनके नियोजित परिवार हों और सुयोग्य संतान हों। इस बारे में हमें चीन से सीख लेनी चाहिए। हमें एक ऐसी रणनीति का सृजन करना चाहिए, जिसके तहत हमारे युवकों को उच्च शिक्षा दी जानी चाहिए। उनमें से एक भी इससे वंचित नहीं रहे। उनमें से कुछ को स्वदेश की समृद्धि हेतु विदेश भेजना चाहिए और अपने संसाधनों पर बोझ घटाना चाहिए।

२. बेहतर परिवहन एवं आवास एवं प्रभावी तथा स्वच्छ प्रशासन के निर्माण हेतु विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञों और साधन सम्पन्न लोगों को अपना शक्ति भर सहयोग करना चाहिए।

३. स्वच्छता, संवेदनशीलता एवं कर्त्तव्यपरायणता से ही एक समृद्ध राष्ट्र का निर्माण होता है। अत: इन बिन्दुओं पर देश के नीति निर्धारकों एवं विचारकों को गहन चिंतन करना चाहिए तथा क्रियान्वयन के बारे में सोचना चाहिए।

४. देश के पांच करोड़ रुपए से अधिक का आर्थिक दोहन स्वास्थ्य सेवाओं के नाम पर किया जा रहा है। अस्पताल और डाक्टर रोगियों को उपभोक्ताओं के समान देखते हैं। निपट व्यावसायिकता का माहौल बन गया है। सामान्य जन के स्वास्थ्य वर्धन हेतु योग, प्राणायाम और चिकित्सा की वैकल्पिक प्रणालियों को मुख्य धारा में लाना महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। ऐसा होने से मैडिकल और पर्यटन की अब तक अलभ्य क्षमता समक्ष आ सकेगी और उसका उपयोग हो सकेगा। ऐसे तत्वों के

मामले में भारत काफी धनी है। खेलों को भी प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। वैदिक ज्ञान स्कूल पाठ्यक्रम का एक आवश्यक भाग होना चाहिए। इससे संपृक्त होने पर पारिवारिक जीवन मूल्यों से समृद्ध होकर व्यक्ति हताशा और अकर्मण्यता तथा यौनाचार आदि की बुराइयों से टकराने में समर्थ हो सकेगा। आधुनिक जीवन और निपट भौतिकवाद के प्रभाव के वशीभूत व्यक्ति जिस विकृत व्यवहार को अपना बैठता है, उससे उसे बचाने में यह ज्ञान एक प्रबल अधिष्ठान बनेगा।

५. देश का कृषक समुदाय आज भी प्रकृति के अवदानों पर निर्भर है। कृषक अपने जीवन निर्वाह हेतु जिन न्यूनतम साधनों, लौह, सीमेन्ट, वस्त्र, पात्र, डीजल आदि का उपयोग करता है, वे निरन्तर महंगी होती जा रही हैं। और कृषि मूल्यों का समुचित निर्धारण नहीं हो पाने से कृषि उसके लिए घाटे का सौदा सिद्ध हो रही है। परिणामत: बड़ी संख्या में किसान हताशा के वशीभूत अपने प्राणों से खेलने पर बाध्य हैं। देश को अब एक द्वितीय हरित क्रांति की आवश्यकता है, जिसमें वैकल्पिक फसलें, जड़ी बूटियां, हार्टिकल्चर तथा बायोटेक्नोलॉजी पर ध्यान दिया जाए। किसानों के उत्पादों के मूल्य निर्धारण पर भी हमें पुन: चिन्तन करना चाहिए।

६. स्वदेशी ही भारत की समृद्धि की कुंजी है। इससे राष्ट्र में गौरव का भाव जाग्रत होता है और इससे आत्मनिर्भर होने में भी मदद मिलती है। बापू की स्वदेशी, महर्षि दयानन्द सरस्वती के स्वराज्य एवं स्वाभिमान, स्वामी विवेकानन्द के ज्ञान, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, सरदार पटेल, भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, रानी लक्ष्मीबाई और वीर सावरकर के शौर्य की इस देश को पुन: आवश्यकता है। शायद उनके आदर्श और विचार अतीत के किसी भी समय की तुलना में सम्भवत: आज भी प्रासंगिक हैं। आज विश्व में टकराव है, असुरक्षा, लालच और भौतिकता का प्राबल्य है।

पूर्वाग्रहों का स्थान तर्कयुक्त चिंतन ने लेना चाहिए। संक्षेप में यह कि इस सुविज्ञ वैदिक श्लोक को अपने जीवन का पथ प्रदर्शक मंत्र मानकर अपने आदर्श का निर्धारण करना चाहिए : असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योर्तिगमय, मृत्योरमाऽमृतं गमय।'

सभ्यताओं के संघर्ष के स्थान पर पारस्परिक चर्चा और विचार-विमर्श के पथ का अनुगमन किया जाना चाहिए, ताकि उनमें जो साझा सूत्र हैं, उन्हें खोजा जाना चाहिए। विश्व हमारे उस महान ज्ञान की शक्ति को अनुभूत करेगा, जिसका उद्घोष उन्होंने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के आह्वान से किया है। मेरा हर भारतीय से आह्वान् है कि वह निम्नांकित संकल्प ग्रहण करे :

''मैं अपने जीवन में किसी आयातित वस्तु का उपयोग नहीं करूंगा। मैं अपने ज्ञान, पुरुषार्थ, शौर्य, साहस, स्वाभिमान, सत्य निष्ठा से स्वदेश को समृद्ध करूंगा। मैं जागा तो देश जागेगा, आगे बढ़ेगा, मुझ से भारत है, अपने ज्ञान, अपने कार्य एवम् अपने प्रत्येक आचरण का मेरे देश पर एवं देश की छवि पर प्रभाव पड़ता है। मैं स्वदेश को समग्र विश्व में सम्मान दिलाऊंगा।

मैं ऐसा ही सोचता हूं अपने संकल्प के साथ जीता हूं। मेरा विश्वास है कि प्रत्येक भारतीय ऐसा करके भारत को एक महान देश बनाने में योगदान कर सकता है।

–कनखल (हरिद्वार)

लड्डू दोनों हाथ

मधुर वचन बोलो सदा, हिय-छल-कपट निकाल।
'चंचल' जीवन चमन की, महकेगी हर डाल।।
साथ न दो अन्याय का, रहो न्याय के साथ।
'चंचल' होंगे एक दिन, लड्डू दोनों हाथ।।
इच्छाओं का तो कभी, भाई अन्त न होय।
'चंचल' सुख सन्तोष में, पाता है हर कोय।।
महँगाई से आजकल, बड़ा बुरा है हाल।
मिलती नहीं गरीब को, जी भर रोटी-दाल।।
लगे विराना सा हमें, अब अपना भी गाँव।
गुमसुम सी चौपाल हर, आग उगलती छाँव।।
चिन्ता नहिं चिन्तन करो, रहो बढ़ाते पाँव।
'चंचल' जीतोगे सदा, जीवन का हर दाँव।।
चलती नाव न नीर बिन, पटरी बिना न रेल।
'चंचल' चले न दोस्ती, बिना परस्पर मेल।।
पीड़ा जब बढ़ती हृदय, जाती आशा टूट।
'चंचल' तब कोई नयी, कविता जाती फूट।।
मौसम से अब हो गयी, पता नहीं क्या भूल।
आम खड़े रोते हुए, हँसते खड़े बबूल।

ओ३म् शरण आर्य 'चंचल', प्रवक्ता-हिन्दी,
राजकीय इण्टर कॉलेज, भौनखाल,
जिला-अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)

ऐतिहासिक-पौराणिक सत्य है रामसेतु

❒ प्रो. योगेश चन्द्र शर्मा

रामायण सहित अनेक प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में रामसेतु की चर्चा है, जिसे त्रेता युग में श्रीराम ने लंका पर आक्रमण करने के लिए नल और नील से बनवाया था। मद्रास प्रेसीडेंसी के दस्तावेजों में भी इस सेतु का विवरण है। ब्रिटिश विद्वान सी.डी. मैकमिलन ने 'द मैन्युअल ऑफ द एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ मद्रास' को १९०३ में यह बतलाया था कि सन् १४८० तक भारत और श्रीलंका के लोग इस सेतु से पैदल आया-जाया करते थे। आम जन मान्यता के अनुसार भी ५००-६०० वर्ष पूर्व तक भारत और श्रीलंका के बीच इस पुल से आवागमन होता था। प्राचीन काल में नेपाल के एक राजा द्वारा इस सेतु का पूजन किए जाने का भी उल्लेख मिलता है। बाद में यह सेतु तूफान और समुद्र में जल-वृद्धि जैसे अनेक कारणों से धीरे-धीरे समुद्र में डूबता चला गया। १८६० ईस्वी में अंग्रेजों की एक सैनिक टुकड़ी को श्रीलंका और रामेश्वरम् के बीच समुद्र में डूबा एक अवरोध मिला था। इस अवरोध का अहसास पहले भी कई बार हो चुका था। इससे अंग्रेज अधिकारियों द्वारा इसकी जांच-पड़ताल की गई, मगर इस तरफ विशेष ध्यान वर्ष २००२ में तब दिया गया, जब अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' ने ऐसे चित्र जारी किए, जिनमें भारत और श्रीलंका के बीच एक पुलनुमा आकृति पानी में अंदर दिखलाई दे रही थी। नासा ने बतलाया कि यह आकृति लाखों वर्ष पुरानी है। इसकी लंबाई ८२ किलोमीटर तथा चौड़ाई २ किलोमीटर है। इस सेतु के ऊपर 3 से ३० फीट तक पानी है। यह सेतु भारत में धनुषकोटि से शुरू होकर श्रीलंका में तलाई मन्नार तक जाता है। इस समाचार ने लोगों की स्मृति को पुनः झिंझोड़ दिया। सब कुछ रामसेतु से मिलता-जुलता था।

अमेरिका तथा पश्चिमी देश राम-कथा तथा राम के द्वारा बनवाए गए सेतु को केवल कल्पना की उपज बताते हैं। दुर्भाग्यवश अमेरिका के दबाव में भारत सरकार ने भी पुल को तोड़ने के लिए अपनी सहमति दे दी। अंग्रेजी संस्कृति में पले-बढ़े और अंग्रेजी विचारधारा के समर्थक हमारे अनेक भारतीय भी इन विचारों से सहमत होते हुए राम-कथा और रामसेतु को केवल कल्पना की उपज मानते हैं। यह घोर आश्चर्य और खेदजनक है। इसीलिए अनेक हिन्दूवादी संस्थाएं अब रामसेतु की रक्षा के लिए आगे बढ़ रही हैं। जहां तक राम-कथा की पुरातनता का सम्बन्ध है, उसके बारे में हमें भारत की कालगणना की जानकारी होना आवश्यक है। केवल अंग्रेजी साहित्य के अध्ययन तक सीमित रह कर ही यह कहा जा सकता है कि विश्व की कोई भी संस्कृति छह-सात हजार वर्ष से अधिक पुरानी नहीं हो सकती। कारण स्पष्ट है। अंग्रेजी ज्ञान स्वयं इससे अधिक पुराना नहीं है। भारत का तो वैदिक साहित्य ही लगभग दस हजार वर्ष पुराना है, जिसे लोकमान्य तिलक सहित अनेक देशी-विदेशी विद्वानों ने स्वीकार किया है। यह वैदिक साहित्य भी केवल कुछ वर्षों की रचना नहीं है। लम्बी अवधि तक ऋषि-महर्षियों ने घोर तपस्या व चिन्तन-मनन के पश्चात् मंत्रों की रचना की और उनमें वायुयान, पनडुब्बी तथा आग्नेयास्त्र सहित अपनी उन अनेक वस्तुओं की चर्चा की, जो उस समय के विज्ञान की उपज थीं तथा जिनमें से केवल कुछ ही आज का विज्ञान प्राप्त कर पाया है। परिस्थितिवश हमारा उस समय का ज्ञान-विज्ञान अब लुप्त हो चुका है। समय-समय पर आए अनेक प्राकृतिक प्रकोपों (या छोटी-बड़ी प्रलय) से भी इस प्रकार का विनाश सम्भव है।

भारत का तो वैदिक साहित्य ही लगभग दस हजार वर्ष पुराना है, जिसे लोकमान्य तिलक सहित अनेक देशी-विदेशी विद्वानों ने स्वीकार किया है। यह वैदिक साहित्य भी केवल कुछ वर्षों की रचना नहीं है।

इसीलिए आज के विज्ञान को ही सब कुछ मानने वाले लोग हमारी उन प्राचीन उपलब्धियों को केवल कल्पना की उपज कह पाते हैं। फिर भी हमारा प्राचीन साहित्य तो उस गौरव गाथा का प्रमाण है ही। आज का विज्ञान काफी खोजबीन के बाद यह तो जान पाया है कि पृथ्वी की आयु के इस समय लगभग दो अरब वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, परन्तु पृथ्वी की कुल आयु के बारे में उसे अब तक भी जानकारी नहीं है। हमारे यहां लाखों वर्ष पूर्व यह गणना सम्पूर्ण रूप में की जा चुकी थी। उसके अनुसार पृथ्वी की कुल आयु ४३२०००००००

(चार अरब, बत्तीस करोड़) वर्ष की है, जिसके बाद महाप्रलय निश्चित है। इस आयु में से ईसा वर्ष २००७ तक पृथ्वी के १,९६,०८,५३,१०७ (एक अरब, छियानवे करोड़, आठ लाख तरेपन हजार, एक सौ सात) वर्ष व्यतीत हो चुके हैं तथा २,३५,९१,४६,८९३ (दो अरब, पैंतीस करोड़, इक्यावे लाख, छियालीस हजार, आठ सौ तियानवे) वर्ष शेष हैं। पृथ्वी का सम्पूर्ण जीवन १५ मन्वन्तरों में विभाजित है। प्रत्येक मन्वन्तर का स्वामी एक मनु होता है। अब तक छह मन्वन्तर व्यतीत हो चुके हैं। अब सातवें मन्वन्तर का स्वामी वैवस्वत मनु है। प्रत्येक मन्वन्तर में ७१ महायुग होते हैं और प्रत्येक महायुग में चार युग (सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग) होते हैं। इस समय २८वें महायुग का कलियुग चल रहा है। सतयुग १७२८००० वर्ष का, त्रेतायुग १२९६००० वर्ष का, द्वापरयुग ८६४००० वर्ष का तथा कलियुग ४३२००० वर्ष की अवधि का होता है। ईसा वर्ष २००७ तक कलियुग के ५१०८ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं तथा ४२६८९२ वर्ष शेष हैं। श्रीराम का जन्म त्रेतायुग में हुआ और इसलिए रामसेतु के निर्माण की घटना भी त्रेतायुग की ही है। यहां यह स्पष्ट नहीं है कि वह त्रेतायुग कौन-से महायुग का था। अगर उसे वर्तमान २८वें महायुग की ही घटना मानें, तो भी उसे १६-१७ लाख वर्ष पुरानी घटना तो माना ही जा सकता है। अगर यह घटना पूर्व के किसी महायुग या मन्वन्तर की है, तो यह घटना करोड़ों वर्ष पूर्व की भी हो सकती है। यह बात अवश्य है कि अंग्रेजों द्वारा प्रदत्त ज्ञान के आधार पर तैयार की गई पाठ्य पुस्तकों में विश्वास करने वाले इन बातों को कपोल-कल्पित ही मानेंगे। अपने स्वयं को राष्ट्रीय साहित्य में पैठकर वस्तुस्थिति को जानने का प्रयत्न ये लोग साधारणतः नहीं कर पाते। अंग्रेजी ज्ञान के विपरीत हर बात को वे राजनीति या कल्पना की बात कहकर पल्ला झाड़ लेते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि राष्ट्रीय स्तर पर जोरदार जन आंदोलन करके भारत सरकार को और उसके माध्यम से अमेरिका को इस बात के लिए विवश किया जाए कि भारत की इस अमर विरासत 'रामसेतु' को न केवल यथावत सुरक्षित रखा जाए, बल्कि पूर्णतः निष्ठा भाव से खोजबीन करके रामसेतु के अवशेष समुद्र से बाहर निकालकर उनका अध्ययन किया जाए। ऐसे पत्थर ढूंढ निकाले गए हैं, जो समुद्र में डूबते नहीं, वरन् तैरते रहते हैं। उत्तर प्रदेश के इटावा नगर में संस्कृत भाषा के दुर्लभ ग्रन्थों की विद्यापीठ में आज भी ऐसा एक पत्थर सुरक्षित है, जिसे संग्रहालय के प्रभारी महिपाल सिंह १९९५ में रामेश्वरम् से लाए थे। यह पत्थर समुद्र पर पत्थरों से बनाए गए पुल की वैज्ञानिकता को प्रमाणित करता है। आवश्यकता इस खोज को और आगे बढ़ाने की है। इस प्रकार के अनेक तथ्य यही प्रमाणित करते हैं कि 'रामसेतु' न केवल ऐतिहासिक और पौराणिक तथ्य है, बल्कि यह व्यावहारिक और वैज्ञानिक सत्य भी है। ('नवज्योति', जयपुर)

टूट रहा राष्ट्रीय एकता का आधार यहाँ

–सूर्यदेव चौधरी

लाखों के पास तो कारें हैं और करोड़ों हैं बेकार यहाँ,
कुछ के पास तो महलें हैं, अनगिनत हैं बेघरबार यहाँ,
राष्ट्रीय धन का घोटाला करते देश के सूत्रधार यहाँ,
जनता है भूखी, नेता-ऑफिसर हैं खा-खाकर बीमार यहाँ॥१॥

अल्पसंख्यक तुष्टिकरण से टूट रहा राष्ट्रीय एकता का आधार यहाँ,
विद्या के मंदिर में चलता है शिक्षा का व्यापार यहाँ,
जबरन थोपा गया है देश पर विदेशी भाषा का भार यहाँ,
लोकतंत्र के नाम पर शासन चलाता वंशवादी परिवार यहाँ॥२॥

है युवा पीढ़ी को बर्बाद करने पर तुली हुई सरकार यहाँ,
चला रही है स्कूलों में यौन-शिक्षा का कारोबार यहाँ,
सोचिए, फिर कैसे आयेगा युवाजनों में सदाचार यहाँ,
और कैसे बनेगा उनके जीवन का सुदृढ़ आधार यहाँ॥३॥

दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है पाश्चात्य विकार यहाँ,
'फ्रेंडशिप' के आवरण में होता है अब व्यभिचार यहाँ,
रैगिंग के नाम पर नवागतों से होता है दुराचार यहाँ,
नमस्ते नहीं, 'हाय-हाय' से होता परस्पर सत्कार यहाँ॥४॥

राजनीति बनती नहीं जब तक जन-सेवा का आधार नहीं,
विद्या का दान और देशी भाषा का होता सत्कार नहीं,
युवाओं को दिया जाता जब तक वैदिक संस्कार नहीं,
तब तक आर्य भूमि भारत का होगा पुनः उद्धार नहीं॥५॥

–झारखण्ड राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,
स्वामी श्रद्धानन्द पथ, राँची-१

संघर्ष और स्वाभिमान की प्रतिमूर्ति : दीपिका बाई शिन्दे

फासे पारधी महाराष्ट्र की एक घुमंतू जाति है। पारधी महिलाओं के संघर्षपूर्ण जीवन के बारे में शहर की महिलाएं कल्पना तक नहीं कर सकतीं। पारधी समाज के पिछड़ेपन और उनके प्रति शेष समाज के दृष्टिकोण की वजह से उनके भाग्य में केवल कष्ट ही लिखे हैं। इसी समाज की एक जुझारू महिला देविका बाई शिंदे ने सभी प्रतिकूल स्थितियों का सामना करते हुए स्वाभिमान पूर्ण जीवन जिया है। क्या है उनके संघर्ष की दास्तान? कैसे पहुंची वह इस स्थिति तक? इन सब बातों से परिपूर्ण उनके जीवन की यह कथा एक आदर्श कथा मानी जा सकती है। यहां हम देविका बाई शिंदे के संघर्ष की एक झलक उन्हीं की जुबानी प्रस्तुत कर रहे हैं। ये अंश हमने साप्ताहिक विवेक द्वारा मराठी में प्रकाशित -'पालावरचं जिणं' पुस्तक से लिए हैं, जिसके लेखक हैं श्री गिरीश प्रभुणे। –सं.

मैं करीब छह साल की थी। घर में हम कुल सात बहनें और दो भाई थे। मेरी बहनों के विवाह हो चुके थे। मैं सबसे छोटी थी। उस समय हम सब मंगलवेढा में रहते थे। अम्मा सुबह लोगों के दरवाजे पर रोटी मांगने जाती थी। मैं अपने झोपड़े के आस-पास सहेलियों के साथ खेलती रहती। हमारे पड़ोस में बेरड, नंदीवाले, वैदूओं (महाराष्ट्र की दूसरी घुमंतु जातियां) के झोपड़े थे। वे सब भी हमारी ही तरह गरीब थे। बेरडों की कम्मा मेरी सहेली थी। इनमें से कोई छोटा-मोटा काम करता था। कोई बंदर नचाता था, लेकिन हमारा कोई रोजगार नहीं था। दिनभर हमारे झोपड़े सुनसान रहते। शाम के समय सब लौटते। तब जो शोर मचता वह देर रात तक चलता रहता था। मेरी अम्मा और बप्पा भी झगड़ते रहते। गंदगी पर भिनभिनाने वाली मक्खियों की तरह। अचानक कोई औरत 'आऽ ऽऽ आऽ ऽऽ मरऽ गईऽऽ रे ऽऽ' चिल्लाते हुए दौड़ती, उसके पीछे उसके घर के सब लोग दौड़ते। खूब हल्ला होता। मैं कम्मा के साथ खेलती रहती। मैं बच्ची थी तभी से मेरे लिए रिश्ते आने लगे थे। शुरू-शुरू में मेरे अम्मा-बप्पा ने सबको मना किया। एक दिन कम्मा ने मुझसे कहा, 'चलोगी स्कूल?'

'स्कूल क्या होता है?'

'स्कूल?... स्कूल होता है। मास्टर होता है। वह पढ़ाता है। मारता भी है।'

'क्यों मारता है?'

'पता नहीं। स्कूल न जाऊं तो मेरा बाप मुझे संटी से पीटता है।'

'मैं कैसे चलूं?'

'मेरा भाई खेत गया है। उसकी पट्टी तुम्हें दे देती हूं। तुम भी चलो।'

मैं कम्मा के साथ स्कूल गई। स्कूल जेल की तरह बड़ा था। मुझे बहुत डर लगा। एक बार बहन के पति से मिलने मैं अम्मा के साथ जेल गई थी। तब भी मुझे ऐसा ही डर लगा था। कम्मा के पीछे लुकते-छिपते मैं स्कूल के अंदर गई। वहां बहुत सारे लड़के-लड़कियां थे।

मास्टर ने मेरा नाम पूछा। मैं बोल नहीं पा रही थी। कम्मा ने बताया–देवका काले। नाम देविका था पर सब इसी नाम से बुलाते थे। .... पारधी है...'। मास्टर को पता नहीं क्या लगा, उसने कहा, ... तू पारधी है? काली कहां, तुम तो गोरी हो। .... हर रोज स्कूल आना। पिताजी क्या करते हैं तुम्हारे?'

मैं देखती रही। उन्होंने फिर पूछा-'तेरा बाप क्या करता है?'

मैंने याद किया–भीख मांगने जाता है... मां के साथ झगड़ता है, मारपीट करता है, शिकार करता है और क्या करता है?.... मैं चुप खड़ी रही। 'रोज स्कूल आना', मास्टर ने फिर कहा। तभी देखा क्लास के दरवाजे पर अम्मा खड़ी चिल्ला रही थी–'तुम यहां क्या कर रही हो?'

'मैं स्कूल में पढ़ाई कर रही हूं....'।

मैंने कहा, लेकिन मैं डर से कांप रही थी।

'स्कूल में पढ़ कर तुम क्या करोगी?' कहते हुए अम्मा ने बालों से पकड़ कर मुझे खींचा और 'धप-धप्प, मेरी पीठ में दो घूंसे जड़ दिए। मास्टर ने मुझे छुड़ाया। लेकिन अम्मा ने फिर पिटाई शुरू की–वह कहती जा रही थी–जाएगी फिर स्कूल....?

'नहीं जाऊंगी.....मत मार.....', रोते हुए मैंने कहा।

दूसरे दिन फिर कम्मा बुलाने आई। मैंने कहा, 'मैं नहीं जाऊंगी। अम्मा ने कहा है, नहीं जाना।'

दोपहर में मास्टर घर आया। उसने पूछा, 'देविका को स्कूल क्यों नहीं भेजा? उसे स्कूल अच्छा लगता है। दाखिला करा देता हूं।'

'रहने दो, वह स्कूल जाएगी तो घर का काम कौन करेगा और पढ़ी-लिखी लड़की से कोई शादी नहीं करता हमारी जमात में।' अम्मा ने कहा। तब से मैं घर पर ही रही।

बारहवें साल महावारी आयी। मेरा बाप तब बीमार था। सोलापुर के सिविल अस्पताल में उसे रखा था। मेरे बाप के पास की खटिया पर भी एक पारधी था। पहचान

हुई तो उसने मेरे बाप से कहा, 'मेरे बेटे की शादी करनी है। तेरी बेटी लूंगा। बोल, चार हजार दूंगा।' मेरे बाप को भी पैसे की जरूरत थी। बीमारी में खर्चा बढ़ गया था। पीछे जब मेरे एक भाई की गिरफ्तारी हुई थी उस समय पुलिस को देने के लिए पैसा नहीं था। तब बप्पा ने झुंबर (मेरी बहन) को बेचा था। शादी से मुझे बहुत डर लगता था। मुझे बेचने की बात चलती तब मैं अम्मा-बप्पा को मारती। लेकिन चार हजार लेकर मेरे बाप ने मुझे उनके हाथ सौंप दिया। पिंपला में हमारी जमीन है। मेरा ससुर तिकड़मी था। हिरनों का शिकार कर उसने जमीन खरीदी थी। शादी के बाद एक दिन मेरी ननद ने मुझसे कहा–यम की (यानी मेरे आदमी की) पहले भी शादी हुई थी...।'

सुन कर मुझे धक्का लगा।

ससुर से मेरा झगड़ा हुआ। उसने डंडे से मुझे पीटना शुरू किया। दोपहर का समय था। झोपड़ों में कोई नहीं था। शाम को पति से पूछा–'पहले तेरी शादी हुई थी तो झूठ क्यों बोला?'

'...मुझे पूछती है?....' गाली देते हुए उसने मुझ पर छलांग लगाई और डंडे से मुझे पीटने लगा। मैं चिल्ला रही थी। सब देख रहे थे।

सास बोली–'पति दस शादियां करे तब भी उसे दोष नहीं लगता।' मेरे मन में आग लगी थी। पारधियों में औरतों के बदन पर दाग निकलते हैं पहली शादी के बाद। भले उसने गंदा काम नहीं किया हो।

***

शिकार करना या खेत में काम करना मुझे नहीं आता था। अम्मा भीख मांगने जाती और बप्पा शिकार करने। भाई भी कुछ न कुछ करता, लेकिन मैं झोपड़े के आस-पास ही खेलती रहती। घर का काम मैं कर सकती थी। कभी किसी और की चीजों को मैंने छुआ नहीं। एक दिन मेरे ससुर घर के दूसरे लोगों के साथ मुझे भी लेकर निकले। हम सात-आठ लोग गांव से बाहर निकले और खेतों में घुस गए। खेत में ज्वार की फसल खड़ी थी। सब लोग फटा-फट ज्वार की बालियां तोड़ कर थैलों में ठूंस रहे थे। यह देखकर मेरे हाथ-पैर खरगोश की तरह कांपने लगे। गला सूख गया। पहले कभी मैंने इस तरह का काम नहीं किया था। 'अरे.... तोड़ ना...।' सास ने कहा। मैं कुछ नहीं कर रही थी, यह देख कर पति ने मेरी कमर में लात जमा दी। मैं पीड़ा से जमीन पर लेट गई। मैंने भी उसे गालियां दीं। आखिर गठरी मेरे सिर पर लाद कर लतियाता हुआ वह मुझे घर ले आया। उस दिन मुझे खाली पेट सोना पड़ा। ससुर तो कह रहा था–'पारधी चोरी नहीं करेगा तो और क्या करेगा? छोड़ दे इसे। हम दूसरी ले आयेंगे।'

उस घटना के बाद ससुर हर रोज मुझे पीटने लगा। पति शिकार के लिए जाता तो पीछे वह पीटता। लौटने पर पति पूछता और मैं बताती, फिर उन दोनों में मार-पीट और गाली-गलौज होती। ससुर का कहना था–'उसके बाप को मैंने चार हजार रुपए दिए हैं, मैं नहीं पूछूंगा तो कौन पूछेगा? मैंने अपनी मेहनत का पैसा दिया है।' उस दिन दोनों में मारपीट हुई। पति ने ससुर का गला दबाया और ससुर ने उसे काट खाया। पति ने मेरा हाथ पकड़ा। उसे मुझसे बहुत प्यार था। वह गांव के सरपंच के पास मुझे ले गया। सरपंच ने ससुर को बुलाया। उसके आने के बाद एक बार फिर वहां वही तमाशा हुआ। सरपंच के पूछने पर ससुर ने कहा, 'इसे तो जूते से पीटना चाहिए। ब्राह्मणी की तरह बैठी रहती है घर पर। हम गरीब हैं। ऐसे बैठ कर कैसे चलेगा?' सरपंच के पूछने पर मैंने बताया, 'मैं घर का सब काम करती हूं.....।'

'....खेत पर तेरा बाप जाएगा क्या?' गाली देते हुए सुसर बोला। फिर मैंने आगा-पीछा नहीं देखा। ससुर मुझसे जो बोलता था, वह सब बताया। मेरे मुंह से अपनी शिकायत सुन कर ससुर झल्लाया, बोला, 'छोड़ दो इसे. ..।' लेकिन इस बार यम ने बिफर कर कहा, 'वह मेरी बीबी है। मैं उसे ही रखूंगा।' 'तुम्हें रखना है तो मेरे घर से निकलो।' ससुर बोला, 'थूकता हूं तुम्हारी इस्टेट पर। मैं कहीं भी रह लूंगा। जा रहा हूं मैं।' पति ने कहा।

फिर हम दोनों मंगलवेढा में मेरे मां-बाप के घर आ गए। बप्पा ने पूछा तो मैंने कहा, 'तुमने मुझे माई की तरह बेच दिया। वे लोग मुझे मार डालेंगे।' फिर हम वहीं रहने लगे। एक दिन ससुर की चिट्ठी आई। मुझे कोई रोग हुआ है। अब मैं जिंदा नहीं रहूंगा, जल्दी आ जाओ।'

हम दोनों फिर पिपला लौटे। सुसर को कैंसर हुआ था। दो-चार महीनों में वह मर गया। अब तक मेरे एक लड़का और एक लड़की हुए थे। तीसरा बच्चा पेट में था।

ससुर की क्रिया के लिए सब इकट्ठे हुए थे। मेरी बहन की लड़की मेरे चचिया ससुर के बड़े बेटे से ब्याही थी। उसे भी ससुराल में काम करने की वजह बता कर ऐसी जगह मारा था कि वह चल नहीं पा रही थी। मेरा भाई भी आया था। उस दिन बहन की लड़की को लेकर सबमें झगड़ा हुआ। मैं भी झगड़ रही थी। मेरी बहन की बेटी की वजह से झगड़ा हुआ इसलिए सबका कहना था कि पति मुझे छोड़ दे। मैं झगड़ने लगी तो पति ने जलती लकड़ी से मुझे पीटा। उस दिन के बाद उसने मुझे छोड़ दिया। उस समय मेरे पेट में बच्चा था। वह पैदा हुआ तब

बप्पा ने पति को बुलावा भेजा। वह नहीं आया। मेरे भाई ने उस पर केस ठोंका तो वह आ गया मुझे लेने। कोर्ट में उसने लिख कर दिया कि अब वह मुझे ठीक से रखेगा। मैं फिर उसके साथ आ गई।

पुलिस एक पारधी के लिए यमदूत होती है। अपने घरवालों को जितना नहीं पहचानते होंगे उतना वे पारधियों को पहचानते हैं। कोई पारधी बाजार में आए तो वे तुरंत खटमल की तरह कहीं से भी निकल आते हैं। पुरुषों को पकड़ कर हिरासत में रखेंगे। महिला हो तो पहले ढकेलेंगे, कहीं भी हाथ लगाएंगे, जांच के बहाने कपड़े उतरवायेंगे, खोले नहीं तो फाड़ देंगे।

पंडित भोसले की बहन पांगरी के गोपीनाथ पवार के घर दी गई थी। उसका पति फरार हुआ तो पुलिस उसे पकड़ कर ले गई। उसके साथ एक बच्चा भी था। जो चोरी उसने नहीं की थी, उसे कबूलवाने लगे। उसने मना किया तो उसके जननांग में मिर्ची डाली। वह तड़प कर मर गई।उसे पुलिस ने बाहर सड़क पर फेंक दिया। उस औरत ने जिंदगी भर पति को चोरी नहीं करने दी थी, बच्चों को स्कूल में पढ़ाया था, लेकिन उसके नसीब में पारधी औरत की मौत ही लिखी थी। कुत्ते की मौत। हमारी कोई कीमत नहीं।

म्हाकुंबा के मेरे चचिया ससुर उद्धव ने अपने बच्चों को पढ़ाया। अपनी बेटी को भी पढ़ाया। उसका एक बेटा कोल्हापुर में पहलवान है। मंझला बेटा नेमचंद बारहवीं तक पढ़कर तलाठी (पुलिस में एक पद जो ग्रामीण क्षेत्रों में तैनात किया जाता है) बना है। छोटा समीर घुमंतू परिषद का कार्यकर्ता है। पारधी जमात में इतना अच्छा कोई दूसरा परिवार नहीं।

समीर ने एक बार खबर दी कि सोलापुर में हमारी जाति की सभा है। पुलिस के अत्याचार के बारे में सभी पारधी इकट्ठे होंगे। पुणे-मुंबई के नेता अध्यक्ष बन कर बूढ़े शिवाजी ने कहा, 'परमेश्वर भी सभी पारधियों को एक जगह ला नहीं सकता।' लेकिन उनका कहना झूठ साबित हुआ। 24, 25, 26 जनवरी 1992 को पारधियों की पहली सभा हुई। कई पारधियों की तरह मुझे लगा था कि इसके पीछे पुलिस का षड्यंत्र होगा। बाकी सब पोला के बैल की तरह सज-धजकर जाएंगे और आगे निकल जाएंगे। पारधी गोबर के कीड़े की तरह गोबर में ही पड़ा रहेगा। हमारी कोई दुनिया नहीं। हमारी कोई दिशा नहीं। जिधर पैर ले जाएं उधर दौड़ना है। चक्री की तरह गोल-गोल घूमना है और एक दिन कहीं रास्ते के किनारे जंगल में या गांव में, पेड़ के नीचे शरीर को छोड़ देना है। मिट्टी में मिल जाना है। जिस जमीन पर शरीर छोड़ना है वह जमीन भी अपनी नहीं...। पारधी क्या आदमी नहीं? बारहसिंगे की तरह जिंदगीभर दौड़ता है और उसी की तरह कभी जाल में फंस जाता है।

मैं, मेरा पति, बच्चे, देवर सब इस सभा में गए। वहां कई पारधी इकट्ठे हुए थे। लोग बोल रहे थे मंच पर। हम पागलों की तरह कभी सुनते कभी आपस में ही लड़ पड़ते। 'पारधी, 'पोलीस', 'अत्याचार' जैसे शब्द सुन कर तालियां पीटते। देखते-देखते किसी वजह से पारधियों में हाथापाई होने लगी। एक ने अपनी कटार निकाल ली। सामने वाले के पेट में घुसा ही देता कि तभी मंच पर खड़े होकर भाषण देने वाले की नजर गई। कूद कर उसने कटार वाले का हाथ पकड़ा। वह जख्मी हुआ। सभी कहने लगे, पारधियों के साथ काम करना आसान नहीं। वहां पुलिस वाले भी थे, लेकिन सादे वेश में। जिस तरह पुलिस पारधियों को पहचानती है उसी तरह पारधी भी पुलिस वालों को पहचान लेते हैं। दोपहर को भोजन था और रात में फिल्म। लेकिन फिल्म में किसी की दिलचस्पी नहीं थी। लोगों ने बताया था कि रात में कोई भी सभा की जगह छोड़कर शहर में नहीं जाएगा। उन्हें डर था कि पारधी चोरी करेंगे।

सुबह महिलाओं के नहाने में बड़ा बवाल मचा। औरतों के नहाते समय जो पानी बहता है उसे पारधी अपवित्र मानते हैं। सभा तीन दिन चली। मंच पर भाषण और पारधियों के झगड़े चलते रहे। एक बार झगड़े में मेरी ननद ने एक की पीठ पर लात मारी। महिला से लात खाने वाला नरक जाता है, ऐसा पारधियों में मानते हैं। देखते-देखते औरतें दनादन लातें मारने लगीं। मार-पीट बढ़ी। मंच से 'शांति रखो', 'शांति रखो' पुकारा गया। तीन दिन बाद अपने-अपने ठिकाने लौट गए।

मेरे लौटने के बाद सास ने कहा, 'तुम्हें किसी ने लात मारी? अब तुम्हें प्रायश्चित करना होगा। तब तक तेरे हाथ का बना कोई नहीं खाएगा।' उसने फिर पूछा, 'सभा में किसी को पैसा नहीं मिला?' मैंने कहा, 'खाना मुफ्त था। पैसा नहीं मिला। पुलिस भी थी लेकिन उसने पारधियों को पड़का नहीं।'

सास ने ताना कसा, 'तो क्या मुफ्त का खाने ही गए थे? रोज मांग कर लाते हैं, क्या खरीद कर लाते हैं?'

छह महीने बाद भैसों का मेला था। उसमें मेरे पति ने ५२५ रु. का जुर्माना भरा। उसके बाद मेरे हाथ का बना खाना खाने लगा।

सभा से लेकिन कुछ हुआ नहीं। पुलिस आती रही। पारधियों को पकड़ती रही। उनकी औरतों की आबरू लूटती रही।

***

उसके करीब छह माह बाद रात के समय हमारे गांव में पुलिस की गाड़ी आयी। कोतवाल बुलानें आया। उसने मेरे पति से कहा, 'तुम्हें पाटिल ने बुलाया है। गाड़ी आयी है।'

सुन कर मेरा दिल तेजी से धड़कने लगा। पति के साथ मैं, सास, बच्चे सब पुलिस थाने पहुंचे।

मसला खुर्द में चोरी हुई थी। मेरे पति पर पुलिस को शक था। चचेरा देवर समीर, नेमचंद,

कमलाकर, ससुर उद्धव को भी पकड़ा गया था। देवर दो दिन बाद पूछताछ के लिए गया तो उसे भी पकड़ कर अन्दर कर दिया। एक महीने तक हिरासत में रखा। कभी तुलजापुर तो कभी कलंब में। मैं पति से मिलने गई तो मिलने नहीं दिया। मैंने हल्ला मचाया तब जाकर मिलने दिया। उस पर दो केस ठोंके थे।

रात को पुलिस हमारे घर आई। मुझे पुलिस थाने ले जाने आये थे वे। मैंने खूब हल्ला मचाया। अपने आप को जमीन पर पटक दिया। कहा, महिला-पुलिस लाओ, तभी जाऊंगी। उन्होंने देखा, मैं नहीं मानी तो घर में पड़ी इकलौती नई चद्दर उठा कर ले गए। मैंने बताया, खरीद कर लाई हूं, रसीद दिखाई तो उन्होंने रसीद फाड़ दी। डंडे से पीट-पीट कर सारा सामान बिखेर कर चले गए। मैंने भी ठान ली, शिकायत करने की।

दूसरे दिन सुबह पहली गाड़ी से मैं तामलवाडी गई। वहां के पुलिस सब इंस्पेक्टर से मेरी झड़प हुई। उसने छेड़ा, 'बड़े नखरे दिखा रही हो...'।

मैंने कहा, 'हमने कुछ नहीं किया। हम खेती करते हैं.... तो बोला, 'तुम तो हेमामालिनी-सी दिखती हो। उस पारधी में क्या रखा है। मेरे साथ रहो।'

मैंने मां-बहन की दुहाई दी। मेरी सास मुझे शांत करने की कोशिश कर रही थी। हल्ला मचता देख उसने हमें यह कह कर भगा दिया-'जाओ जाओ, फिर यहां आओगी तो अंदर कर दूंगा।'

मैंने कहा, 'फिर कभी इस तरह मेरे दरवाजे पर आओगे तो मुझसे बुरी कोई नहीं होगी। याद रखना।'

पंद्रह दिन बाद हम सब कलंब गए। हमें पता चला कि मेरे पति को पुलिस वहां लेकर गई है। वहां के एक इन्स्पेक्टर ने मुझे मेरे पति से मिलवाया। फिर एक तरफ ले जाकर कहा, 'इन लोगों को पंद्रह दिन बाद यहां से कहीं और ले जाएंगे। तुम अगर तीन हजार रुपए दो तो मैं इसे किसी और जगह नहीं भेजूंगा।'

मैं घर आई। उधार लिया। कुछ बकरियां बेचीं। दो हजार लेकर इन्सपेक्टर को दिए। वहां के और पुलिस वालों ने पचास-पचास रुपए लिए। वकील ने भी रुपए लिए। फिर भी पुलिस ने पति को हिरासत में रखा। चार दिनों बाद मेरी चचेरी सास भी चार हजार रुपए लेकर गई थी। वे भी दिए, लेकिन उन्होंने मेरे पति को नहीं छोड़ा। रात हमने बस स्टैंड पर गुजारी। गुंडे-मवाली हमारे आस-पास सीटी बजाते हुए मंडरा रहे थे। हम सो नहीं सके। सुबह वकील से मुकदमे के कागज लेकर उस्मानाबाद गए। वहां दूसरा वकील करना पड़ा। उसने औरंगाबाद से लाने के लिए कहा। चार-चार हजार रुपया लिया। लेकिन उसने भी हमारा कोई काम नहीं किया। साढ़े चार महीने तक मैं भागदौड़ करती रही। पुलिस स्टेशन, वकील, कोर्ट सब जगह गई। सबको रुपए दिए। सबने रुपए लिए पर काम किसी ने नहीं किया। हम सबके कुल पचास हजार रुपए खर्च हुए। किसी ने कर्जा लिया, किसी ने गहना बेचा। हमने कुएं के लिए बैंक से कर्जा लिया था, वह सब इसी में खर्च हुआ।

पति की रिहाई से पहले तुलजापुर में एक और सभा हुई थी। तब सास के कहने पर मैंने भाषण दिया था। मेरे भाषण के बाद सबने तालियां बजायीं। उसके बाद मैं हर सभा में उपस्थित रहने लगी। बैठकों में शामिल हुई। यमगरवाडी में पारधियों के लिए बने होस्टल में जाने लगी।

नागपुर में पुलिस ने पारधियों के घर तोड़े थे। औरतों की इज्जत लूटी थी। इसलिए वहां होने वाली सभा में एक लाख लोग मतान्तरण करने वाले थे।

मैं भी उनके साथ गई थी। मैंने भी भाषण दिया। मेरा नाम अखबार में छपा। वहां से लौटी तो पति के तेवर बदले हुए थे। उसे मुझ पर शक हो गया था। लोगों ने उसके कान भरे थे। 'देवकी अब तेरी नहीं चलेगी....', कहा था। एक दिन वह मुझे जंगल ले गया। वहां राम के मंदिर में मूर्ति के चरणों में उसने पटक-पटक कर अपना माथा लहूलुहान किया। फिर उसी में से खून निकाल कर उसने मेरे माथे पर टीका लगाया। कहा, 'तुम चाहे जहां जाओ, जो चाहे करो, अब इसके बाद तुम मेरी ही रहोगी।' पति शांत हुआ, लेकिन समाज नहीं। हमारी लड़ाई अभी भी जारी है।

o-o-o

पर्व-व्यंजन

मखाने की खीर

सामग्री : दूध-१ लीटर, मखाने-५० ग्राम, चीनी-५ बड़े चम्मच, इलायची-आधा छोटा चम्मच, बादाम कटे हुए-४ छोटे चम्मच, पिस्ते कटे हुए-२ छोटे चम्मच, केवड़ा एसेन्स-१-२ बूंद, केसर-३ ग्राम।

विधि : मखानों को बिना घी के सूखा भून लें। ठंडा होने पर मखाने के चार-चार टुकड़े काट लें। दूध को गरम करें। उबाल आने पर चीनी डालें। थोड़ा गाढ़ा होने पर उसमें मखाने डालकर १० मिनट तक पकाएं। केसर इलायची व एसेन्स डालें। ठंडा होने के लिए फ्रिज में रखें। बादाम-पिस्ते से गार्निश करें।

गुलाब संदेश

सामग्री : दूध-एक लीटर, पिसी चीनी-१०० ग्राम (आधा कप), सिरका/नींबू का रस-३-४ बड़े चम्मच, रोज एसेन्स-१-२ बूंद, स्ट्रॉबरी लाल रंग १-२ बूंद, पिसी इलायची-एक चौथाई छोटा चम्मच, ताजा गुलाब की पत्तियां सजाने के लिए।

विधि : दूध को एक बर्तन में तेज आंच पर खूब अच्छी तरह उबाल लें। छैना बनाने के लिए आंच कम कर नींबू का रस/सिरका ३ बड़े चम्मच डालें। यदि दूध न फटे तो एक चम्मच और डालें। तुरंत एक जाली के कपड़े से छानकर पानी निकालें। पानी से खूब अच्छी तरह धोएं। थोड़ा सा निचोड़कर एक मोटे कपड़े में दबा कर पानी सुखा दें। एक साफ चौड़े बर्तन में हथेली से मसलें, जब तक कि यह चिकना न हो जाए। चीनी डालकर अच्छी तरह मिक्स करें और मथ लें। लाल रंग व रोज एसेन्स मिलाएं। मनचाहा आकार देकर गुलाब संदेश को इलायची से गार्निश करें।

बादाम का हलवा

सामग्री : बादाम की गिरी-२५० ग्राम, खोया-१०० ग्राम, काजू-१० ग्राम, चीनी-२५० ग्राम, घी-१ कड़छी, खरबूजे की गिरी-थोड़ी सी।

विधि : बादाम ५-६ घंटे के लिए पानी में भिगो दें। जब अच्छी तरह भीग जाएं तब छिलका उतारकर बारीक पीस लें। चीनी में १२५ मिली लीटर पानी डालकर चाशनी बनाएं। कड़ाही में घी डालकर खोया भून लें। जब खोया गुलाबी हो जाए तब पिसा हुआ बादाम डालकर भूनें। जब अच्छी तरह भुन जाए तब चाशनी डालकर मिश्रण को अच्छी तरह चलाएं। जब हलवा घी छोड़ने लगे तब समझिए कि हलवा तैयार है। परोसते समय काजू से सजा दें। खरबूजे की गिरी भी बुरक दें।

कुरकुरे पान

सामग्री : आलू-२०० ग्राम, अरबी-२०० ग्राम, कच्चा नारियल आधा कप, हरी मिर्च-२, सेंधा नमक-स्वादानुसार, काली मिर्च-१ छोटा चम्मच, जीरा पाउडर-१ छोटा चम्मच, सामक के चावल-एक चौथाई कप, तलने के लिए तेल।

विधि : आलू व अरबी अलग-अलग उबालकर छील लें। सामक के चावल भी उबाल लें। सबको इकट्ठा मसल लें। कच्चे नारियल की एक फांक बारीक काट लें। शेष नारियल कस लें। हरी मिर्च बारीक काट लें। सामक, आलू, अरबी, कच्चा नारियल, हरी मिर्च, सेंधा नमक, काली मिर्च व जीरा पाउडर अच्छी तरह मिला लें। कड़ाही में तेल गर्म करें। तैयार मिश्रण की बॉल्स बना लें। हथेली पर चिकनाई लगाकर प्रत्येक बॉल को पान का आकार दें और मंदी आंच पर कुरकुरे होने तक तलें।

वेटिजेबल बेक

सामग्री : राजगीरे का आटा-१ प्याला, कुट्टू का आटा-१/४ प्याला, बेकिंग सोडा-१/२ छोटा चम्मच, सेंधा नमक, कालीमिर्च स्वादानुसार, अदरक, हरीमिर्च का पेस्ट-२ छोटे चम्मच, हरा धनिया बारीक कटा-१/३ प्याला, पालक के पत्ते (बारीक कटे हुए)-१५-२०, बारीक कटी गाजर-१/४ प्याला, बारीक कटी फूलगोभी-१/४ प्याला, बारीक कटी शिमलामिर्च-१/४ प्याला, हल्की भुनी व कुटी मूंगफली-२ बड़े चम्मच, हल्के भुने तिल-१ बड़ा चम्मच, दही-१ प्याला, नींबू का रस-२ छोटे चम्मच, तेल-२ बड़े चम्मच।

विधि : दोनों आटे, नमक, बेकिंग सोडा व दही मिलाएं। आधे घंटे बाद बाकी की सारी सामग्री मिलाएं व अच्छी तरह फेंटें। इसे चिकनाईयुक्त बेकिंग टिन में पलटें। गर्म ओवन में २०० डिग्री सेंटीग्रेट पर आधे घंटे तक बेक करें या फिर भाप में पका लें।

चल यार धक्का मार

साधारणत: वाहन को जब बटन दबाकर स्टार्ट किया जाता है तो इससे जुड़ी विद्युत मोटर, जिसे प्रारंभक मोटर भी कहते हैं, स्टार्ट हो जाती है। इससे वाहन के इंजन में क्रैंक लग जाता है और दहन प्रक्रिया का चक्र आरम्भ हो जाता है। परन्तु कभी-कभी बटन दबाने के इस साधारण तरीके से वाहन स्टार्ट नहीं होते हैं। इस अवस्था में या तो विद्युत मोटर कार्य करना बन्द कर देती है या फिर मोटर को ऊर्जा प्रदान करने वाली बैटरी डाउन हो जाती है। यदि इंजन में विभिन्न पिस्टन अपनी अन्तिम (चरम) अवस्था में हों तब भी बटन दबाने के बाद वाहन स्टार्ट नहीं होते हैं। ऐसी स्थिति में क्रैंक को घुमाकर ही वाहन स्टार्ट किया जा सकता है। और ऐसा तभी हो सकता है जब वाहन गियर में हो और इसे पीछे से धकेला जाए। इससे होता यह है कि जब वाहन को पीछे से धकेला जाता है तो इसके पहियों को गति मिलती है। फलस्वरूप पहियों से जुड़ी क्रैंक-शाफ्ट घूमने लगती है और इंजन स्टार्ट हो जाता है। इसमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि पीछे से धकेलते समय वाहन का गियर में होना अनिवार्य है, अन्यथा वह स्टार्ट नहीं होगा।

दरियाई घोड़ा

लगभग ४ टन भारी और ४ मीटर लम्बा बड़े आकार का यह जानवर पृथ्वी पर पाए जाने वाले बड़े जानवरों में दूसरे नम्बर पर आता है। यह जानवर अफ्रीका में दक्षिण सहारा में पाया जाता है। दरियाई घोड़ा अपना अधिकतम समय पानी में बिताता है। इसकी उठी हुई आँखें, नथुने तथा कान इस दैत्यनुमा जानवर को अपने आसपास के वातावरण को मॉनीटर करने में सहायक होते हैं। किसी समय यह लगभग पूरे अफ्रीका में नदियों में पाया जाता था पर अब कुछ स्थानों से यह लुप्त हो गया है और सिर्फ कुछ सुरक्षात्मक स्थानों पर ही पाया जाता है।

ये जानवर खाने के लालची होते हैं तथा सिर्फ रात में खाते हैं। हर रात को ये लगभग ७५ किलो से भी ज्यादा घास खा जाते हैं। कई बार इन्हें भोजन की खोज में ३० किलोमीटर से भी अधिक चलना पड़ता है। हिप्पोज मातृक परिवारों में रहते हैं। जब नर हिप्पो जानवर थोड़ा बड़ा हो जाता है तो इन्हें अपने परिवार को छोड़ने के लिए मजबूर किया जाता है तथा उन्हें अपने क्षेत्र खोजने जैसी मुश्किल का स्वयं सामना करना पड़ता है। मादा हिपोपोटेमस एक ऐसे बच्चे को जन्म देती है, जिसका भार लगभग २५ किलो होता है तथा जन्म के बाद ५वें मिनट में ही वह चलने तथा तैरने के काबिल हो जाता है।

शगुन के दीप जलते हैं

झालरों की रोशनी की —डॉ. पंकज परिमल
छांव में छः-सात
फिर शगुन के दीप जलते हैं
फिर पुराने तलघरों से
झाड़ पोंछकर
आ गए हैं देव माटी के
अब रजत प्रतिभाओं के अभिषेक होते
देख के चुपचाप हैं ठिठके
पान कर अपमान का
इस रात में छः-सात
फिर शगुन के दीप जलते हैं
फिर बताशे-खील का नैवेद्य शरमाया
विविध-मिष्ठान्न के सम्मुख
फिर पटाखों की सघन आवाज में
शुभ-मंत्र भी ज्यों हो गए हैं चुप
याजकों के बिन उबाते
देवता के पास
फिर शकुन के दीप जलते हैं

(पृष्ठ २९ का शेष)

मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहिये। अन्यथा समय और आवश्यकतायें किसी की भी प्रतीक्षा नहीं करती है। यदि आर्यसमाज अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिये कार्य नहीं करता है तो आर्यसमाज के सार्वभौमिक कार्यों को तो मानव समाज के अन्य लोग आगे बढ़कर करेंगे ही। तब यह श्रेय आर्यसमाज नहीं ले पायेगा। आज समाज में वैदिक विवाह संस्कार, मृतक संस्कार को वैदिक रीति से करने/कराने के साथ गुरुडम, पाखण्ड और अंधविश्वास का जहां प्रचार बढ़ रहा है वहां अपने तरीके से इसे खत्म करने के लिये भी अनेक लोग/संगठन अपने-अपने तरीके से आगे बढ़ रहे हैं अत: आर्य समाज को चिन्तन करना चाहिये कि यदि हम स्वयं सोये रहेंगे तो आर्यसमाज का कार्य उनकी प्रतीक्षा नहीं करेगा बल्कि आर्यसमाज के कार्य को आगे बढ़ाने वाले गैर आर्यसामाजिक लोग ही होंगे, वे नहीं।

झारखण्ड राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, राँची

जन्म दिवस के अवसर पर

आर्य समाज के मूकसाधक स्व. लाला चतुरसेन गुप्त

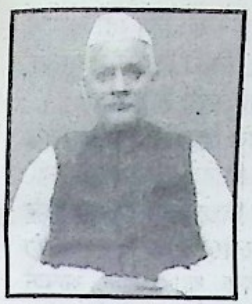

–डॉ. धर्मपाल

वदनं प्रसाद सदनं सदयं
हृदयं सुधा सुधोवाचः।
करणं परोपकरणं येषां
केषां न ते वन्द्या।।

जिनका मुख मंडल सदा प्रसन्नता से खिला हुआ है, हृदय में दया है, वाणी से अमृत छलकता है, जीवन का एक मात्र कार्य परोपकार ही है–ऐसे चारों गुणों से युक्त पुरुष किसके लिए वन्दनीय नहीं हैं? अर्थात् आदरणीय हैं। स्वर्गीय लाला चतुरसेन गुप्त ऐसे गुणों से विभूषित व्यक्तित्व के धनी थे।

चलं चित्तं वित्तं चलं जीवितं यौवनम्।
चलाचलमिदं सर्वं, कीर्त्तियस्य सः जीवति।।

चित्त, वित्त, जीवन, यौवन, सब संचल और नाशवान् हैं जिनकी कीर्त्ति स्थिर है, संसार में उनका जीवन अमर है। जीना उसी का सफल है जो किसी का हो गया, जो किसी के काम आ गया। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आजीवन सदस्य, सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड के प्राण, सार्वदेशिक साप्ताहिक के यशस्वी संपादक, आपादमस्तक ठोस, कर्मठ आर्यपुरुष, महर्षि दयानन्द सरस्वती के प्रति निष्ठावान्, आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार में सर्वात्मना समर्पित, निर्भय, स्पष्टवादी, विपरीत परिस्थितियों में भी धीर, गंभीर, स्वाध्याय, सत्संग, धर्मप्रेम तथा आत्मचिन्तन में सदैव संलग्न लाला चतुरसेन गुप्त सरल प्रकृति के व्यक्ति थे। आप अनुभवी एवं शीलवान सद्गृहस्थ थे। आपका कार्य करने का ढंग अनुपम एवं अनुकरणीय था। आप इन्द्रप्रस्थ पुस्तक भण्डार में बैठे हुए सदैव शंका समाधान, धर्मचर्चा तथा आर्य जाति के उत्थान के लिए नव-नवीन योजनाएं बनाने में तत्पर एवं संलग्न रहते थे। आप एक कुशल व्यवसायी, साहित्यकार, श्रेष्ठ प्रकाशक, प्रचारक, युवा चरित्र निर्माता तथा आर्य जाति के परम हितैषी थे। यद्यपि विद्यालयी शिक्षा अल्प समय तक होने पर भी अध्ययन, मनन, चिन्तन, श्रवण तथा नैसर्गिक तार्किक शक्ति के आधार पर आपने वैदिक वाङ्मय को अन्तर्मन की गहराई तक आत्मसात् कर लिया था। आपके क्रान्तिकारी और मौलिक विचार युवा शक्ति के लिए तो स्पर्शमणि थे। आपने व्यवसाय में निरन्तर परिश्रम, लग्न, निष्ठा, विश्वास तथा सत्य के आधार पर उल्लेखनीय सफलता प्राप्तकी। आप दुर्लभ पुस्तकों के संग्रहकर्त्ता, प्रकाशक तथा वितरक थे। आपका जीवन वैदिक सिद्धान्तों, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता से परिपूरित आस्थाओं का जीवन था। सत्य और सरलता, त्याग और तपस्या आपके जीवन के आदर्श थे।

श्री लाला चतुरसेन जी का जनम उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के प्राचीन कस्बे शामली में १ नवम्बर १९०६ को (संवत् १९६३) में एक सुसम्मानित परिवार में हुआ था। छोटी-सी अवस्था में व्यापार का कार्य सीखना शुरू किया और इसका अच्छा ज्ञान प्राप्त करने पर १२ वर्ष की आयु में ही दिल्ली में लाला लक्ष्मीनारायण आढ़ती के यहाँ चले आये। १४ वर्ष की अल्प आयु में आपका विवाह हो गया। दिल्ली में कपड़े के विख्यात आढ़ती ला. सोहनलाल निहालचन्द, लाला राधेलाल धर्मदास और अन्त में लाला नन्दलाल मनोहरलाल के यहाँ बड़ी कुशलतापूर्वक कार्य करने के बाद सन् १९२७ में कपड़ा व्यापार से छुट्टी ले ली थी।

एक दिन सौभाग्य से आपको आर्य समाज, चावड़ी बाजार के मन्त्री मास्टर शिवचरणदास जी मिल गये। उन्होंने देखा कि यह युवक प्रतिभाशाली है। उनके सत्संग व स्वाध्याय से बस आपके जीवन का कायाकल्प ही हो गया और आप आर्यसमाज के लिए समर्पित हो गये।

आपने साहित्य प्रकाशन का कार्य शुरू किया। प्रारम्भ में आपने स्वाधीनता संग्राम में युवकों को नई प्रेरणा देने वाली अनेक पुस्तकें प्रकाशित कीं। उसके पश्चात् आपने "महाभारत" के मूल संस्कृत हिन्दी अनुवाद सहित एक-एक हजार पृष्ठों के सोलह भाग प्रकाशित किए। आचार्य चाणक्य के विश्वविख्यात ग्रंथ "कौटिल्य अर्थशास्त्र" का प्रकाशन किया। इसके बाद तो शुक्र नीति, दण्ड नीति, नारद नीति, कणक नीति, विदुर नीति आदि अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित किए।

शासक ही अच्छे या बुरे समय का कारण होता है। राजा अच्छा है तो प्रजा अपने आप ही अच्छी हो जायेगी। यह सोचकर लाला जी धर्म तथा नीति सम्बन्धी

ग्रन्थों को लेकर जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, प्रतापगढ़, इंदौर, धौलपुर, कोटा, बून्दी, डूंगरपुर के नरेशों एवं उनके धर्मगुरुओं से मिले। सभी से आपने प्राचीन साहित्य को पढ़ने तथा उसके प्रचार-प्रसार के लिए आग्रह किया। इस कार्य में आपको बड़ी अच्छी सफलता मिली। समय-समय पर आप राजाओं तथा उनके धर्मगुरुओं को पत्र भी लिखा करते थे।

आप १९४० में पुनः अपनी मातृभूमि शामली पहुंच गये। आपने शामली में अपने परम स्नेही मित्र डाक्टर प्यारेलाल गुप्त के सहयोग से वैदिक प्रेस स्थापित किया। यहां भी साहित्य प्रकाशन का कार्य शुरू किया गया। कुछ समय बाद प्रभु प्रेरणा से आपने एक छोटे से प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना की जो धीरे-धीरे चल निकला।

६ फरवरी १९४८ को जब गांधी हत्याकांड के सम्बन्ध में सारे देश में अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियां हुईं तो आप भी टाइफाइड की अवस्था में ही स्थानीय कांग्रेसी नेताओं के आग्रह पर गिरफ्तार कर लिए गए। मुजफ्फरनगर जेल और आगरा सेन्ट्रल जेल में आपको रखा गया। पुलिस द्वारा आप पर अनेक आरोप लगाये गये, पर इलाहाबाद हाईकोर्ट से निर्दोष छूट गये। सत्य बात यह थी कि गांधी जी को मारने वाले से आपका कभी दूर का भी सम्बन्ध न था। वाल्टेयर का यह कथन सत्य है कि–"वह शासक अत्याचारी है जो अपनी रुचि के अतिरिक्त और कोई नियम नहीं मानता।"

जून १९५२ में आप पुनः दिल्ली आ गये। उन दिनों यहाँ आर्य समाज की प्रकाशन संस्था सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड की स्थिति डांवाडोल थी। इसे सुचारु रूप से चलाने का भार आपको सौंपा गया। यह कार्य आपने अनेकानेक बाधाओं के होते हुए भी बड़ी सफलतापूर्वक चलाया। यहीं से आपने लाखों की संख्या में विभिन्न आर्य ग्रन्थ प्रकाशित करके अत्यन्त सस्ते मूल्य पर आर्य जनता तक पहुंचाये।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का मुखपत्र "सार्वदेशिक" पहले मासिक रूप में निकलता था। मासिक अवधि बहुत लम्बी होती है। आर्य जनता को हर सप्ताह रविवार के साप्ताहिक सत्संगों में आर्य जगत की विशेष सूचनायें मिलनी चाहिए। इसके लिए आवश्यक था कि एक साप्ताहिक पत्र शुरू किया जाये। यह कार्य बहुत कठिन था फिर भी लाला जी ने इसे अपने हाथ में लिया। नाम मात्र का मानदेय लेकर एक ध्येनिष्ठ कार्यकर्ता के रूप में आपने इस कार्य को अन्त तक निभाया।

सार्वदेशिक सभा ने आर्य समाज स्थापना शताब्दी को लक्ष्य में रखकर चारों वेदों के प्रकाशन का कार्य शुरू करवाया था। यह कार्य महान् था और शक्ति सीमित थी। लाला जी का स्वास्थ्य यद्यपि ठीक नहीं था, फिर भी जीवन के अन्तिम भाग में स्वास्थ्य की कोई परवाह किए बिना, आपने यह भगीरथ कार्य अपने हाथों में लिया। दिन रात लगे रहे। कागज लाना, प्रूफ देखना, बाईंडिंग करवाना, बिक्री विभाग में पुस्तकें पहुंचाना आदि छोटे-बड़े कार्य आप स्वयं ही करते।

आर्य समाज के अनेक दिग्गज विद्वानों श्री पं. रामचन्द्र जी देहलवी, श्री व्यासदेव शास्त्री, श्री देवेन्द्रनाथ शास्त्री, डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार, श्री हरिश्चन्द्र विद्यालंकार, प्रो. राम सिंह एम.ए. आदि के निकट सम्पर्क, निरन्तर स्वाध्याय और सत्संग ने आपको महान ज्ञानी बना दिया था। विद्वान् आपके अध्ययन, मनन और गहरी सूझबूझ का लोहा मानते थे। अनेक राजनेता तो आपसे मार्गदर्शन लेते थे।

"यह बात कुछ महत्व नहीं रखती कि आदमी मरता कैसे है, बल्कि यह बात महत्व की है कि वह जीता किस प्रकार है?"

लाला जी एक कर्मशील देशभक्त, निःस्वार्थ एवं सच्चे आर्यसेवक थे। आर्य समाज और उसमें भी विशेषतया सार्वदेशिक सभा की आपने अंतिम श्वांस तक जो सेवायें कीं उनकी कमी सदा अनुभव की जाएगी। किसी व्यक्ति के अभाव में ही उसके महत्व एवं आवश्यकता का पता लगता है। आपने जो सेवायें कीं उससे उनकी कीर्ति अमर है और अमर रहेगी।

आर्य समाज के सम्पर्क में आते ही आपने आर्य साहित्य एवं भारतीय संस्कृति का गहन अध्ययन किया और निरन्तर स्वाध्याय करते रहे। जिसका परिणाम यह हुआ कि आपकी लेखनी से छोटी-बड़ी लगभग सौ पुस्तकें लिखी गयीं। अनेक पुस्तकें ब्रिटिशकाल में जब्त भी हुईं। आपकी अनेक पुस्तकें जैसे–'हड़ताल', 'स्वर्ग में हड़ताल', 'धर्म के नाम पर', 'देशी राज्यों में व्यभिचार', 'नरक की रिपोर्ट', 'पूंजीपतियों की कहानी', 'रंगीले लाला', 'कश्मीर कैसे मुसलमान बना', 'पुरुषार्थ प्रकाश', 'स्वर्ग में महात्मा गांधी की प्रेस कांफ्रेंस', सुनो कामराजजी', 'राष्ट्रपतिजी के नाम ग्यारह पत्र', 'साम्प्रदायिकता का नंगा नाच', 'नेहरूजी की आर्य विचारधारा', 'भारत मां की अश्रुधारा', 'ईसाइयों के खूनी कारनामे', 'विदेशी समाजवाद के मुंह पर चपत', 'गांधी जी की गाय', 'पागलखाने से', 'मैं बुद्धू बन गया', 'भाग्य की बातें', 'मैं हँसूँ या रोऊँ', 'परलोक में २६ जनवरी', आदि बहुचर्चित रहीं। आपकी मृत्यु से दो माह पूर्व लिखी पुस्तक 'महान आर्य हिन्दू जाति मृत्यु के मार्ग पर' इतनी क्रान्तिकारी

सिद्ध हुई कि दो मास में ही उसके दो संस्करण निकालने पड़े। गुप्तजी के जीवन का ध्येय आर्य साहित्य का प्रचार और प्रसार ही कह दिया जाये तो अत्युक्ति न होगी। आपने अपने जीवन में दुर्लभ आर्य साहित्य को ढूंढ-ढूंढकर प्रकाशित किया और लागत मात्र में देते रहे। महाभारत के सोलह खण्डों को छापकर आपने राजस्थान की एक-एक रिसायत में स्वयं जा-जाकर प्रचारित किया। कौटिल्य अर्थशास्त्र', 'शुक्रनीति', 'नारद नीति', 'कणिक नीति', 'दण्डनीति', 'विदुर नीति', 'भोज प्रबन्ध', 'डॉ. बर्नियर की भारत यात्रा' के अनेक सस्ते संस्करण निकाले। आर्य साहित्य के प्राय: अनेक लुप्त ग्रन्थों जैसे 'दयानन्द दिग्विजयम्' और 'स्वधर्म रक्षा' को प्रकाशित कर आर्य समाज की महती सेवा की। अनेक संस्करणों द्वारा आपने सत्यार्थप्रकाश की एक लाख से भी अधिक प्रतियाँ और 'दैनिक यज्ञ प्रकाश' की तो दस लाख से भी अधिक प्रतियाँ प्रकाशित कर दी थीं। 'महर्षि दयानन्द जीवन चरित्र' व 'व्यवहार भानु' की भी एक-एक लाख प्रतियाँ विभिन्न माध्यमों से प्रकाशित कराईं। आपने अनेकों प्रकाशनों–जैसे महाभारत प्रकाशन, राष्ट्रनिधि प्रकाशन, सत्यार्थ प्रकाश ट्रस्ट प्रकाशन, धर्म प्रकाशन, भारतीय राजनीति प्रकाशन, सार्वदेशिक प्रकाशन, सार्वदेशिक साप्ताहिक, आर्य व्यवहार प्रकाशन इत्यादि से किसी न किसी रूप में सम्बन्धित रहकर सैकड़ों पुस्तकों के सस्ते संस्करण निकलवाये। 'सार्वदेशिक' साप्ताहिक के 'विद्यार्थी जीवन विशेषांक' को एक ही बार में एक लाख छपवाकर, आर्य साहित्य के प्रकाशन के इतिहास में एक स्वर्णिम पृष्ठ जोड़ दिया।

स्वराज्य रक्षक दल, भारतीय चाणक्य परिषद्, भारतीय त्यागवादी दल इत्यादि के माध्यम से आपने अनेक लेखकों, विद्वानों, राजनीतिज्ञों की ऐतिहासिक भूलों को उजागर करके उन्हें शुद्ध कराया। अनेक दैनिक, साप्ताहिक, मासिक पत्रों के माध्यम से भी आपने आर्य साहित्य की जहाँ श्रीवृद्धि की, वहाँ (आर्य) जाति को समय-समय पर चेताया भी। 'केसरी' साप्ताहिक में आपके 'गुरूजी का चिट्ठा', 'आर्य ज्योति' में 'मैं समाजी कैसे बना' स्तम्भ बहुत समय तक चर्चा के विषय बने रहे। 'सार्वदेशिक' साप्ताहिक में तो आप प्राय: लिखते ही रहते थे। सन् १९६५ में आपने ताम्रपत्रों पर सत्यार्थ प्रकाश अंकित करवाना प्रारम्भ किया था। यह आपकी अद्भुत एवं अनुपम योजना थी। किन्हीं कारणों से यह कार्य पूरा न हो पाया। इससे प्रेरणा लेकर पं. रामेश्वराचार्य जी ने ताम्रपत्री 'श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषद्' का निर्माण किया और महामहिम राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन को भेंट किया। उस महाग्रंथ की अन्तिम पृष्ठ पर दी गई पुष्पिका में खुदवाया गया था–मुकुन्दी-गर्भ सम्भूतो जगन्नाथ सुतो द्विज:।

रामेश्वराचार्य शास्त्री पुरुषार्थे धृतादर:।।

सुहृदां सहयोगेन चतुरसेनेन प्रेरित:।

गीताशास्त्रमिदं कृत्स्नं, ताम्रपत्रेष्वकारयत्।।

सन् १९६६ में लाला जी की प्रेरणा से यह अद्भुत, अपूर्व एवं अद्वितीय कार्य सम्पन्न हुआ था।

लाला जी का देहावसान २३ दिसम्बर १९७३ को नई दिल्ली के आयुर्विज्ञान संस्थान में हुआ था। अपने भौतिक शरीर के रूप में लाला जी आज हमारे बीच में नहीं हैं परन्तु आपका यश: शरीर अभी भी हमारे आसपास छाया हुआ है। आपकी अमृतवाणी, परोपकार प्रधान असंख्य कार्य, साहित्य साधना, आर्य जाति के उत्थान की लगन, हमारे जीवन पथ में आलोक स्तम्भ की भाँति देदीप्यमान हैं। वास्तव में आप अमर हैं, आपकी गरिमा अपार है। आपके प्रति सश्रद्ध नमन्।

टंकारा ऋषिबोधोत्सव २००८ के मुख्य अतिथि माननीय श्री भैरोंसिंह शेखावत होंगे

टंकारा। प्रतिवर्ष की भाँति आगामी ५, ६, ७ मार्च को महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में ऋषि-बोधोत्सव का आयोजन किया जा रहा है। जिसके मुख्य अतिथि श्री भैरोंसिंह शेखावत (पूर्व उपराष्ट्रपति) होंगे। तथा एक सप्ताह पूर्व यजुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन भी होगा।

समाजसेविका श्रीमती टावरी को श्रद्धांजलि

भिलाई। समाज सेविका एवम् धर्म कर्म के क्षेत्र में अपनी उदारता और सहृदयता के लिए प्रसिद्ध स्वर्गीया देवी टावरी की स्मृति में आयोजित श्रद्धांजलि सभा में टावरी परिवार द्वारा प्रकाशित "मां" शीर्षक कविता और चित्रमय फोल्डर का विमोचन शिक्षाविद् तोरणसिंह ठाकुर ने श्री हनुमान मंदिर सेक्टर-२ के प्रांगण में किया। श्री ठाकुर ने श्रीमती टावरी के बहुमुखी सेवाकार्यों की प्रशंसा की। बख्शी सृजन पीठ के अध्यक्ष बबनप्रसाद मिश्र, वित्त आयोग के पूर्व अध्यक्ष, वीरेन्द्र पान्डेय, समाजसेवी रामानन्द अग्रवाल, रामकिशन मूंदड़ा, मृत्युंजय शर्मा, डॉ. विमल पाठक, आदि ने श्रीमती टावरी की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और पारिवारिक क्षेत्र में प्रदत्त अनेक घटनाओं पर प्रकाश डालते हुए कहा कि उन्होंने अपना अस्सी वर्षीय पूरा जीवन समाज और राष्ट्र के हित चिन्तन में लगाया।

दुःख का कारण=अविद्या

–स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

'मिथ्याज्ञान' का ही दूसरा नाम 'अविद्या' है। आइए, इसे थोड़ा विस्तार से समझने और यह जानने का प्रयत्न करें, कि अविद्यउा क्या है, और इससे दुःख कैसे उत्पन्न होता है। इस विषय को अच्छडी प्रकार से समझने के लिये हम योगदर्शन का यह सूत्र लेते हैं–अनित्याशुचिदुखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या।। योगदर्शन २/५

अर्थात् (१) अनित्य को नित्य समझना, (२) अशुचि को शुचि समझना, (३) दुःख को सुख समझना और (४) अनात्मा को आत्मा समझना, अविद्या है। इस प्रकार से अविद्या के चार भाग हुए। साथ ही साथ इन चारों बातों को उल्टा करके भी देख लीजिये। अर्थात् (१) नित्य को अनित्य समझना, (२) शुचि को अशुचि समझना (३) सुख को दुःख समझना और (४) आत्मा को अनात्मा समझना भी अविद्या ही है। संक्षेप में अविद्या की परिभाषा यह हुई कि–जो वस्तु जैसी हो, उसको वैसा न समझकर, कुछ और ही समझना या उससे उल्टा समझना='अविद्या' हैं और जैसे को तैसा समझना–'विद्या' है।

(१) अनित्य को नित्य समझना–नित्य का अर्थ होता है, जो वस्तु सदा रहे, कभी नष्ट न हो। नित्य शब्द में आरम्भ में 'अ' अक्षर जोड़कर (नञ् तत्पुरुष समास के अनुसार) शब्द बना लिया-अनित्य। अब इसका अर्थ हो गया उल्टा=जो वस्तु सदा न रहे, नष्ट हो जाये। तो अब प्रथम अविद्या का स्वरूप हो गया=अनित्य (नष्ट होने वाली) वस्तुओं को नित्य (नष्ट न होने वाली), मानना। ऐसी बहुत-सी वस्तुएँ हैं, जो समय आने पर या कभी भी नष्ट हो जाती हैं। जैसे-शरीर, धन, सम्पत्ति, पुत्र-परिवार, पद-प्रतिष्ठा आदि। ये सब वस्तुएँ अनित्य कहलाती हैं क्योंकि ये कभी-भी नष्ट नहीं हो सकती हैं और हो भी जाती हैं। परन्तु संसार के लोग इन अनित्य वस्तुओं को नित्य=(सदा रहेंगी) ऐसा मानते हैं। इसीलिये दुःखी होते हैं।

यदि किसी व्यक्ति से पूछा जाये कि-आपका शरीर नित्य है या अनित्य? तो वह उत्तर देगा–अनित्य। अर्थात् सदा जीवित नहीं रहेगा। शब्दों से तो उत्तर ठीक है। परन्तु क्या यह बात वास्तव में मन, बुद्धि में बैठ गई? नहीं। मन में तो यही समझता है कि–मैं सदा जीवित रहूंगा, कभी नहीं मरूंगा। इसी का नाम अविद्या है।

ज्ञान दो प्रकार का है। (१) शाब्दिक ज्ञान (२) वास्तविक ज्ञान। 'शाब्दिक ज्ञान' उसे कहते हैं–जब ज्ञज्ञन कुछ और हो एवं आचरण कुछ और हो। जैसे–सिगरेट पीने वाला व्यक्ति कहता है–"मैं जानता हूँ, सिगरेट पीने से नुकसान होता है।" परन्तु फिर भी वह पीता है। आचरण, ज्ञान के अनुसार नहीं है, उससे भिन्न है। अतः सिगरेट पीने वाले व्यक्ति का ज्ञान–'शाब्दिक ज्ञान' है। 'वास्तविक ज्ञान' उसे कहते हैं–जब ज्ञान भी वैसा और आचरण भी वैसा। अर्थात् दोनों समान हों, भिन्न नहीं। जैसे–बिजली की तार को छूने से नुकसान होता है=(करण्ट लगता है, मृत्यु भी हो सकती है)। इस बात को जानने वालों का आचरण भी वैसा ही है। बिजली की तार को कोई नहीं छूता। इसे 'वास्तविक ज्ञान' कहते हैं। तो जो व्यक्ति शब्दों से कहता है–मैं सदा जीवित नहीं रहूंगा। परन्तु मन में ऐसा मानता है और आचरण भी ऐसा है कि मैं सदा जीवित रहूंगा; उसका ज्ञान 'शाब्दिक' है। और शाब्दिक ज्ञान ठीक होते हुए भी आचरण वैसा न होना अथवा शाब्दिक ज्ञान भी गलत होना–ये दोनों ही 'अविद्या' है। वास्तविक ज्ञान का ही दूसरा नाम=यथार्थ ज्ञान, तत्त्वज्ञान या विद्या है।

अब कुछ ही तत्त्वज्ञानी लोगों को छोड़कर, शेष सभी लोगों में यह अविद्या गहरी जड़ें जमा कर बैठी हैं-कि 'हम सदा जीवित रहेंगे, कभी नहीं मरेंगे।' और जब मृत्यु आती है तब रोते हैं, दुःखी होते हैं। इस दुःख का कारण–अनित्य शरीर को नित्य मानना', उक्त चार में से प्रथम अविद्या ही है।

प्रश्न–आप कह सकते हैं कि लोगों में यह अविद्या है। और वे अनित्य शरीर को नित्य मानते हैं।

उत्तर–किसी भी व्यक्ति का व्यवहार/आचरण उसके वास्तविक ज्ञान की स्थिति को बतलाता है। उदाहरण-कुछ लोग दिल्ली से मुम्बई तक रेल में यात्रा कर रहे थे। बच्चे भी थे, कुछ बड़े (प्रौढ़) भी थे। रेल यात्रा सुखद रही। सब बच्चे हंसते-खेलते, रेल की सीटों पर कूदते-नाचते मुम्बई पहुंच गये। मुम्बई पहुंचने पर प्रौढ़ व्यक्तियों ने बच्चों से कहा, 'चलो, रेल से नीचे उतरो, मुम्बई आ गया है।' बच्चों को रेलयात्रा में बड़ा आनन्द आया था। वे रेल को छोड़ना नहीं चाहते थे।

परन्तु प्रौढ़ व्यक्तियों के आदेश के कारण उन्हें रेल छोड़नी पड़ी। बड़ा कष्ट हुआ। प्रौढ़ व्यक्तियों को रेल छोड़ने में कष्ट नहीं हुआ, बच्चों को कष्ट हुआ। क्यों? प्रौढ़ व्यक्ति 'विद्या' में थे, वे वास्तव में जानते थे-रेल की सीटें हमें मुम्बई यात्रा तक ही मिली हैं। मुम्बई में वे छोड़नी पड़ेंगी। और उन्होंने मुम्बई में सीटें छोड़ देने का मन बना लिया था। अत: उन्हें, रेल छोड़ने में कष्ट नहीं हुआ। बच्चे अविद्या में थे। उन्होंने रेल यात्रा में सुख का अनुभव करने के बाद यह मान लिया था-कि रेल की ये सीटें सदा हमारे साथ रहेंगी और हम सदा इसी तरह रेल में आनन्द मनाते रहेंगे। इसी अविद्या के कारण-जब बच्चों को मुम्बई में सीटें छोड़नी पड़ीं-तो दु:ख हुआ।

संसार के लोगों की भी यही स्थिति है। ईश्वर की ओर से मनुष्यों को कुछ वर्ष तक जीने के लिये शरीर मिला है। लोगों ने अविद्या से यह मान लिया-कि हम सदा जीयेंगे। मृत्यु आने पर जब शरीर छोड़ना पड़ा, तो दु:ख हुआ। जैसे बच्चे अविद्या के कारण रेल छोड़ते समय के समय दु:खी हुए, वैसे ही संसार के लोग भी अविद्या के कारण मृत्यु के समय दु:खी हुए। उनके दु:खी होने के व्यवहार से पता चलता है, कि लोगों में अविद्या है (शाब्दिक ज्ञान है)। इस शाब्दिक ज्ञान=अविद्या) से हमारा कल्याण नहीं हो सकता। वास्तविक कल्याण तो 'तत्त्वज्ञान' या 'विद्या' से ही होता है। अविद्या तो दु:ख को ही उत्पन्न करती है।

इसी प्रकार से धन-सम्पत्ति, पुत्र-परिवार, पद प्रतिष्ठा आदि के सम्बन्ध में भी समझ लेना चाहिये, कि ये सब भी 'अनित्य' ही हैं=(कभी भी नष्ट हो सकती हैं।) परन्तु लोग इन सब को भी नित्य=(सदा हमारे पास रहेंगी) ऐसा मानते हैं। अर्थात् 'अविद्या' में हैं। इसी अविद्या के कारण ही, जब इनमें से कोई वस्तु नष्ट हो जाती है, तब दु:खी होते हैं, रोते-चिल्लाते हैं। अत: दु:ख का कारण अविद्या ही है। यह चर्चा हुई-अनित्य को नित्य मानना-अविद्या है, इस भाग की।

अब इसे उल्टा करके देखिये। अर्थात्-नित्य वस्तु को अनित्य मानना भी 'अविद्या' है। आत्मा नित्य है या अनित्य? नित्य। क्या आत्मा की उत्पत्ति होती है? नहीं। क्या आत्मा का विनाश होता है? नहीं। आप कौन हैं-शरीर या आत्मा? आत्मा। तो आप=(आत्मा) मर जाएंगे? नहीं। तो फिर मरने से क्यों डरते हो। क्यों दु:खी होते हो। उत्तर स्पष्ट है-'अविद्या' के कारण। 'आत्मा न जन्म लेता है न मरता है' यह सब शाब्दिक ज्ञान है। मन में तो अविद्याउ ही है-कि मैं मर जाऊंगा।' इसी अविद्या के कारण व्यक्ति मृत्यु से डरता है और दु:खी होता है। यहां तक अविद्या के चार भागों में से प्रथम भाग की चर्चा हुई। अब दूसरे भाग को देखिये।

(२) अशुचि को शुचि समझना-शुचि का अर्थ है-शुद्ध। इस 'शुचि' शब्द में भी पूर्ववत् 'अ' अक्षर जोड़ देने पर शब्द बन जाएगा-'अशुचि'। और अर्थ भी उल्टा हो जाएगा-अशुद्ध। तो दूसरी अविद्या हुई-अशुद्ध को शुद्ध मानना। इसके भी दो रूप हैं। (क) अशुद्ध वस्तुओं को शुद्ध मानना, (ख) अशुद्ध कर्मों को शुद्ध मानना।

(क) कुछ वस्तुएं अशुद्ध हैं-जैसे शरीर, मांस, शराब, अण्डे, अफीम, तम्बाकू आदि। लोग इन शरीर आदि वस्तुओं को शुद्ध मानते हैं-यह अविद्या है। जब पुरुष, स्त्रियों को देखते हैं अथवा स्त्रियाँ, पुरुषों को देखती हैं; तो उन्हें एक दूसरे के शरीर अशुद्ध प्रतीत नहीं होते, बल्कि बहुत शुद्ध दीखते हैं। यही अविद्या है। शरीर वास्तव में कितना अशुद्ध है, यह बात तब समझ में आती है, जब कुछ गम्भीरता से इस प्रकार से शरीर के सम्बन्ध में चिन्तन किया जाये। शरीर में मल-मूत्र, रक्त, मांस, चर्बी आदि भरा पड़ा है। प्रतिदिन शौच, स्नानादि करके इसे जीवनभर शुद्ध करते रहते हैं, तब भी पूरा शुद्ध नहीं हो पाता। प्रतिदिन नया-नया मल शरीर में उत्पनन होता ही रहता है। चौबीस घण्टे शुद्ध वायु (ऑक्सीजन) का ग्रहण करते हैं और अशुद्ध वायु (कार्बनडाई आक्साइड) छोड़ते रहते हैं। जुकाम, बुखार, टी.बी., कैंसर, एड्स आदि जैसे भयंकर रोग इस शरीर में उत्पन्न होते रहते हैं। एक इंजेक्शन की सुई एक व्यक्ति को लगाकर, वही सुई दूसरे व्यक्ति को नहीं लगा सकते। अन्यथा एक व्यक्ति का रोग दूसरे को लग सकता है। डॉ. लोग घाव पर पट्टी बांध कर साबुन से हाथ धोते हैं। मृत्यु होने पर इस अशुद्ध शरीर को लोग दो दिन भी घर में रखना नहीं चाहते। इत्यादि घटनाओं से पता चलता है-कि यह शरीर सेवा, कितना अशुद्ध है। फिर भी आज संसार के लोग इस अशुद्ध शरीर को अत्यन्त शुद्ध मानकर इसके पीछे दीवाने=(पागल) हो रहे है। यह घोर अविद्या नहीं, तो और क्या है अशुद्ध शरीर को शुद्ध मान लेने पर इसके प्रति राग उत्पन्न होता है, जब यह शरीर अपना अशुद्ध रूप दिखाता है, तब व्यक्ति को दु:ख होता है, आश्चर्य होता है कि-'अरे! यह वही शरीर है जिसे मैं अत्यन्त

शुद्ध मानता था। इसमें तो टी.बी., रक्त कैंसर जैसे भयानक रोग उत्पन्न हो गये हैं।''

इसी प्रकार से खान-पान के क्षेत्र में मांस, अण्डे, शराब, अफीम, तम्बाकू, गुटका-मसाला आदि वस्तुएं भी अशुद्ध, (अभक्ष्य) और स्वास्थ्य एवं बुद्धिनाशक हैं। इन्हें भी लोग अशुद्ध नहीं मानते अथवा अशुद्ध मानते हुए भी इनका सेवन करने से फिर अनेक प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक दु:ख भोगने पड़ते हैं। इस प्रकार से यह 'अविद्या' दुखों का कारण बनती है। (ख) कुछ कर्म अशुद्ध हैं-जैसे क्रोध करना, असत्य बोलना, चोरी, रिश्वत लेना-देना आदि। इन अशुद्ध कर्मों को भी लोग अशुद्ध (बुरा) नहीं मानते। बल्कि परिस्थितियों आदि के अनेक बहाने बनाकर इन अशुद्ध कर्मों को करते रहते हैं। इन अशुद्ध (बुरे) कर्मों को शुद्ध मानना और करना अथवा बुरा मानते हुए भी परिस्थितियों के बहाने से करने में दोष न मानना-अविद्या है। बुरे कर्म तो बुरे ही हैं। उनका तो दण्ड ही मिलेगा। चाहे आप किसी भी बहाने से करें। क्या मजबूरी से चोरी करने पर, वह अपराध नहीं माना जाता? यदि आप कमजोर हैं, और चोरी, झूठ, रिश्वत आदि बुरे कर्मों से बच नहीं पा रहे हैं; तो अपनी कमजोरी स्वीकार कीजिये। बहाने बनाने से आप इन बुरे कर्मों को करने पर, दोष से मुक्त नहीं हो जाएंगे। परन्तु परिस्थितियों के बहाने से इन बुरे कर्मों को करते हुए भी इनमें दोष न मानना-अविद्या है। इसके कारण आगे इन कर्मों का दण्ड (दु:ख) भोगना पड़ेगा। इस प्रकार यह अविद्या दु:ख का कारण बनेगी।

अब इसे भी उल्टा करके देख लीजिये। शुद्ध वस्तुओं (घी, दूध, फल, सात्विक भोजनादि) को अशुद्ध या पुराना भोजन मानकर इससे घृणा करना, इसका सेवन न करना भी अविद्या है। इसी प्रकार से सत्य बोलना, प्रेम-सभ्यता-नम्रता से व्यवहार करना, दया, परोपकार आदि शुभ कर्मों को अशुभ कर्म मानना अथवा इन्हें पिछड़े कर्म मानकर इनसे घृणा करना भी अविद्या ही है। अब अविद्या के तीसरे भाग की चर्चा करेंगे।

(३) दु:ख को सुख समझना-दु:ख दो प्रकार का है। (१) शुद्ध दु:ख। जैसे-सिरदर्द आदि होने पर होता है। इसे तो सभी लोग दु:ख ही मानते हैं। इसे सुख कोई भी नहीं मानता। परन्तु (२) दु:ख, सुख में मिश्रित है, जो कि चार प्रकार का है। परिणाम दु:ख, ताप दु:ख, संस्कार दु:ख और गुणवृत्तिविरोध दु:ख। इसकी व्याख्या आप इसी पुस्तक के प्रथम लेख में पढ़ चुके हैं। संसार की वस्तुओं में विद्यमान इन चार दु:खों में व्यक्ति दु:ख नहीं मानता, बल्कि वस्तुओं में शुद्ध सुख मानता है। अब इसे भी उल्टा करके देख लीजिये अर्थात् सुख को दु:ख समझना अविद्या है। माता-पिता की सेवा, बड़ों का आदर-सम्मान करना, विद्या=सत्संग, ईश्वर उपासना आदि कर्मों में सुख मिलता है। परन्तु संसार के लोग (विशेष रूप से आजकल की नई पीढ़ी के युवा लोग) इन कर्मों में दु:ख का अनुभव करते हैं। और इन दु:खदायक कर्मों की खिल्ली उड़ाते हैं। यह भी अविद्या ही है।

(४) अनात्मा को आत्मा समझना-आत्मा का अर्थ है-चेतन पदार्थ। चेतन पदार्थ दो हैं। 'अन्' जोड़कर (नञ् तत्पुरुष समास के अनुसार) शब्द बना लिया-अनात्मा। अब इसका अर्थ भी उलट गया। 'अनात्मा' का अर्थ बना-जो आत्मा नहीं है=(जीवात्मा और ईश्वर से भिन्न वस्तुएँ)। जीवात्मा (या जीव) तथा ईश्वर से भिन्न बहुत-सी जड़ वस्तुएं हैं। जैसे-शरीर, मन, इन्द्रियां, धन-सम्पत्ति, पुत्रादि के शरीर, मूर्तियां, चित्र आदि। इन अनात्मा=(जड़) वस्तुओं को लोग आत्मा मानते हैं। अर्थात् या तो अपनी आत्मा का ही रूप मानते हैं, या अपनी आत्मा का एक हिस्सा मानते हैं। या इन जड़ वस्तुओं को चेतन तत्त्व मानते हैं। जैसे जड़ मूर्त्तियों को चेतन ईश्वर मानकर उन्हें खिलाना-पिलाना, सुलाना-जगाना, नहलाना-धुलाना आदि व्यवहार करते हैं। यह सब अविद्या है।

लोग शरीर को, (जो कि आत्मा नहीं, आत्मा से भिन्न है, जड़ है), आत्मा (या चेतन) मानते हैं। यह अविद्या है। जड़ शरीर को चेतन आत्मा मान लेने से इस अविद्या से शरीर में आसक्ति उत्पन्न होती है जो दु:ख का करण बनती है जब शरीर मरने पर जड़ प्राप्ति होता है इसी प्रकार से मन भी जड़ वस्तु है, इसे भी अविद्या के कारण लोग चेतन मान लेते हैं। फिर शिकायत करते हैं-'मन बड़ा चंचल है। मानता नहीं है। संसार में भटकाता रहता है।' यह सब मानना अविद्या है। इसके कारण व्यक्ति मन का नियन्त्रण कर नहीं पाते और अनेक दु:ख भोगते हैं। स्कूटर, कार आदि जड़ वस्तुएं हैं=(स्वयं क्रिया नहीं कर सकती)। इनको तो लोग जड़ मान चुके हैं, अत: शिकायत नहीं करते-कि मेरा स्कूटर या कार नहीं मानती। यह सड़क से अपने आप नीचे उतर जाती है।' परन्तु मन के बारे में अविद्या है। जबकि मन भी कार आदि के समान ही जड़ है, लेकिन लोग इसे चेतन मानते हैं।

(शेष अगले अंक में)

जो सौ वर्ष पूर्व मॉरिशस में आर्यसमाज की स्थापना में सहयोगी रहे थे

लालों के लाल : मॉरिशस पहुंचे थे मणिलाल

मणिलाल डॉक्टर

–डॉ. श्याम सिंह शशि

भारत ऋषि-मुनियों का देश रहा है। जिन महापुरुषों ने सत्य के अनुसंधान और मानवकल्याण के लिए सांसारिक सुखों को त्याग दिया तथा धर्म का यायावर-पथ प्रशस्त किया, वे युग-प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित हुए एवं समाज के पथ-प्रदर्शक बने।

यायावरी, पर्यटन, प्रवास और घुमक्कड़ी यदि सार्थक हों तो फिर उसका लाभ सारा समाज उठाता है। कुछ लोग विद्याध्ययन के लिए विदेश जाते हैं तो कुछ धनार्जन या रोजी-रोटी के लिए। पर, कुछ ऐसे भी दीवाने हैं जो स्वतन्त्रता और स्वधर्म प्रचारार्थ अपना देश तक छोड़ देते हैं ऐसे ही एक महापुरुष थे–मणिलाल डॉक्टर जिन्होंने गांधी जी की आज्ञा से मॉरिशस, फिजी, दक्षिण अफ्रीका तथा अन्य द्वीपों की यात्राएं कीं। उन्होंने देखा कि भारतवंशियों पर अनेक अत्याचार हो रहे हैं। उन्हें भारत से कभी शर्तबंदी श्रमिक बनाकर ले जाया गया था. किन्तु जब उन्हें दासों की तरह रखा जाने लगा तो क्रांति की लहरें उठना स्वाभाविक थीं। उनकी करुण पुकार भारत तक पहुंची और भारत के लाल मणिलाल ने अपना देश छोड़कर मॉरिशस की राह पकड़ी। वे 13 अक्टूबर, 1907 को समुद्री जहाज से वे पोर्टलुई पहुंचे थे। हाल ही में उनके आगमन के 100 वर्ष पूरे होने पर राजकीय सहयोग से मॉरिशस में अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए। इन पंक्तियों के लेखक को भी राजकीय अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। प्रस्तुत है मणिलाल डाक्टर के जीवन-वृत्त तथा उनके कार्यकलापों का एक संक्षिप्त दस्तावेज।

मणिलाल का जन्म 28 जुलाई, 1881 को बड़ौदा के एक गुजराती परिवार में हुआ था। उनका पूरा नाम मणिलाल मगनलाल शाह था। 'डाक्टर' शब्द उनके पिता के पेशे के कारण जुड़ गया। उनके पिता डाक्टर मगनलाल एक राजकीय मनोरोगी चिकित्सालय में अधिकारी थे।

मणिलाल ने 1903 में एल.एल.बी. तथा 1904 में मुंबई विश्वविद्यालय में एम.ए. की परीक्षाएं पास की थीं। वे 1905 में बैरिस्ट्री की पढ़ाई करने के लिए लंदन गए। वहां उनकी भेंट पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा, वीर सावरकर, राजा महेन्द्र प्रताप तथा अन्य क्रान्तिकारियों से हुई। सभी में एक विचार दृढ़ हुआ कि उन्हें अंग्रेजों की नौकरी नहीं करनी तथा भारत के साथ-साथ भारतवंशियों के ब्रिटिश उपनिवेशों को भी येन-केन प्रकारेण आजाद कराना है।

मणिलाल जब मॉरिशस पहुँचे तो देखा कि एक ही जुर्म के लिए अश्वेतों को श्वेतों की अपेक्षा अधिक कड़ा दंड दिया जाता है। उन्हें अत्यधिक कष्ट हुआ। वे कानून को बदलवाने के लिए जी-जान से जुटे और सफलता प्राप्त की। इस संबंध में एक रोचक प्रसंग है। मणिलाल डाक्टर ने वहां के सुप्रीम कोर्ट में जब सिर पर पगड़ी तथा पैरों में जूते पहनकर प्रवेश किया तो उन्हें जिरह के लिए इजाजत नहीं दी गई। लेकिन वे कहां मानने वाले थे! उन्होंने अपना प्रयास जारी रखा और इस प्रकार की परम्परा का अंत कराया।

डॉक्टर मणिलाल भारतवंशियों की आवाज़ को लिपिबद्ध करने के लिए 'हिन्दुस्थानी' साप्ताहिक पत्र निकाला जो पहले अंग्रेजी तथा गुजराती में था। बाद में हिंदी भाषा-भाषी पाठकों की अधिक संख्या होने के कारण गुजराती की जगह हिंदी संस्करण ने ले ली। पत्र में यदा-कदा सरकार विरोधी लेख छपने के कारण जुर्माना भी अदा करना पड़ता था। मणिलाल डाक्टर के लेख 'लिबरल एक्शन', 'राजेन लोरां' आदि प्रमुख पत्र-पत्रिका में भी छपते थे। उन्होंने पोर्ट लुई में आर्य समाज की स्थापना कराने में महत्वपूर्ण योगदान किया था तथा बाद में 'हिन्दुस्थानी' पत्र का छापाखाना भी आर्य सभा को सौंप दिया था।

आर्य समाज के साथ-साथ उन्होंने सामाजिक स्तर पर समूचे हिन्दू समाज को संगठित करने के लिए यंग मैन हिन्दू एसोसिएशन की स्थापना भी की। १९०७ में वीर सावरकर द्वारा लिखित 'भारतीय स्वतंत्रता संग्राम' इतिहास ग्रन्थ हालैंड में गुप्त रूप से छपा था, अंग्रेजों ने इस ग्रन्थ के प्रकाशन से पूर्व ही इस पर प्रतिबंध लगा दिया था। मणिलाल किसी तरह हालैंड में गुप्त रूप से छपी इस पुस्तक की पांच प्रतियां अपने साथ मॉरिशस ले आए, जिसे विष्णु दयाल बंधुओं ने पढ़ा तो उनमें क्रांति की ज्वाला भड़क उठी। इस पुस्तक को मॉरिशस के अन्य युवा वर्ग ने भी पढ़ा और आजादी की प्रेरणा ली। मणिलाल की प्रेरणा का ही प्रतिफल था कि आर.के. बुधान, पं. काशीनाथ किस्तू, बासदेव, डॉ. योरिशस क्यूरे

और शिवसागर रामगुलाम जैसे युवक मॉरिशस के सामाजिक तथा राजनैतिक नेताओं के रूप में आगे उभर कर आए। मणिलाल ने सामाजिक पथ को और अधिक मजबूत करने के लिए अथक परिश्रम किया था। उन्होंने भारत में आर्यसमाज के आन्दोलन से प्रेरणा ली थी। **उनका विश्वास था कि मॉरिशस के दबे कुचले भारतीय श्रमिक समाज को आर्य समाज के माध्यम से ही एक दृढ़ सूत्र में बांधा जा सकेगा।** आर्य नेता मोहन लाल मोहित तथा डॉ. उदयनारायण गंगू ने उनके लेखों में आर्यसमाज की प्रशंसा का उल्लेख किया है। २९ सितम्बर १९५० में मणिलाल जी का आर्य परोपकारिणी सभा तथा आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से अभिनन्दन किया गया था। आर्यसमाज ब्रिओले ने उन्हें १२ फरवरी १९५० को सम्मानित किया था। **मणिलाल के आगमन का सौवां वर्ष मनाने के लिए श्रेय भी मॉरिशस की आर्य सभा व वहां के आर्य समाजियों को जाता है, जिन्होंने सरकार तथा अन्य धार्मिक व सामाजिक संगठनों के सहयोग से व्यापक स्तर पर मणिलाल जी को याद किया।** उल्लेखनीय है कि वहां के कार्यक्रमों को सम्पन्न कराकर भारत वापस आ रहा था। वहां आर्य नेता डॉ. राम प्रकाश समारोह समापन के अवसर पर आर्य सभा की ओर से आमंत्रित थे।

मणिलाल डाक्टर को भारत मूल के मॉरिशसवासी अपना महान नेता मानने लगे थे जिससे अनेक गोरे व अभारतीय उनके शत्रु भी बन गए थे। अत: उन्हें १९११ में मॉरिशस छोड़ने के लिए मजबूर किया गया। मणिलाल ने भारी मन से मॉरिशस से विदा ली और फिजी के भारतवंशियों के उद्धार के लिए चल पड़े। वे कुछ समय सुवा में रहे और भारतवंशियों की कानूनी सहायता नि:शुल्क अथवा अल्पराशि लेकर करते रहे। इसी बीच १९११ में वे दक्षिण अफ्रीका गांधीजी से मिलने के लिए भी गए थे। उन्होंने गांधीजी से मॉरिशस तथा फीजी के भारतवंशियों के अधिकारों के संबंध में विचार-विमर्श किया। वहां उनकी भेंट जया कुमारी से हुई। वह गांधीजी के मित्र की बेटी थी जिसे वे जेकी बेन के नाम से भी बुलाया करते थे। उन्होंने जेकी का विवाह मणिलाल से कराया और दोनों को आशीर्वाद देकर भारतवंशियों की सेवा के लिए फीजी भेजा। मणिलाल ने फीजी में वकालत करते समय निश्चय किया कि भारतवंशियों को आज़ाद कराना है। गोरे शासकों को जब उनकी योजना की भनक पड़ी तो उन्हें लगने लगा कि मणिलाल गांधीजी के एजेन्ट हैं। जो भी हो, मणिलाल ने अपना राजनैतिक अभियान जारी रखा। फलत: १९१५ में फीजी की लेजिस्लेटिव काउंसिल में एक भारतीय को नामजद कराकर ही चैन ली। मणिलाल ने यहां भी एक और अखबार 'इंडियन सेटलर' २ जून १९१८ से निकालना शुरू किया जिसमें भारतवंशियों के दु:ख-दर्द के समाचार छपा करते थे। उन्हीं दिनों फीजी में इंडियन इम्पीरियल एसोसिएशन की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य फीजी के भारतीय आप्रवासियों की सब प्रकार से सहायता करना था। इस संबंध में मणिलाल डाक्टर ने गांधीजी को भी पत्र भेजा था। उन्होंने एन्ड्रूज तथा पीयरसन को मणिलाल का हाथ बटाने के लिए फीजी भेजा था।

मणिलाल ने सुवा तथा नौसोरी में समय-समय पर श्रमिकों की सभाएं बुलाईं और उनके वेतनमान बढ़वाए। गोरे शासकों को यह सब रास नहीं आया उन्होंने पीस आर्डर आर्डिनेंस १८७५ का सहारा लिया तथा उन्हें, उनकी पत्नी तथा सहयोगी हरपाल महाराज व फ़ाज़िल खान को भारतवंशी-बहुल प्रान्तों में जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। अंतत: मणिलाल डॉक्टर ने १५ अप्रैल, १९२० को फीजी छोड़ दिया।

कालांतर में प्राय: सभी उपनिवेश ब्रिटिश शासकों के सीधे ही अधीन हो गए। मणिलाल पर न केवल इन उपनिवेशों में बल्कि श्रीलंका, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड तथा भारत के बम्बई व मद्रास हाईकोर्ट में भी प्रैक्टिस करने के लिए रोक लगा दी गई। केवल १९२२ में पटना हाईकोर्ट ने उन्हें गया के लोवर कोर्ट में वकालत करने की स्वीकृति प्रदान की। वहां उन्होंने भारतीय किसान तथा मज़दूर पार्टी का गठन कराया। उन्होंने समाज की सेवा में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। वे 'सोशलिस्ट' अंग्रेजी पत्र में नियमित रूप से लिखते रहे। मणिलाल 1935-40 में अदन तथा सुमालीलैंड में भी अपनी सेवाएं देते रहे। वे १९५३ में अदन लौटे तथा बम्बई में रहने लगे। यह महापुरुष तमाम जीवन संघर्षों से जूझते हुए ८ जनवरी, १९५६ को सदा के लिए इह लोक छोड़ गया।

मैंने मॉरिशस गणराज्य के उपप्रधानमंत्री डॉ. अहमद राशिद बीबीजॉन, भारतीय दूतावास के उच्चायुक्त बी. जयशंकर तथा वहां के कई मंत्रियों व अनेक बुद्धिजीवियों की उपस्थिति में एक प्रस्ताव रखते हुए कहा था कि मणिलाल डाक्टर के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर अनुसंधान के लिए मॉरिशस विश्वविद्यालय में मणिलाल पीठ की स्थापना की जाए। यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ तथा उपप्रधानमंत्री ने उसके कार्यान्वयनं का भरोसा दिलाया। बाद में मैंने डाक्टर आर.एस. नीवूर प्रीतमजी तथा मोहितजी के साथ राष्ट्रपति डॉ. सर अनिरुद्ध जगन्नाथ से भेंट की और मणिलाल शोधपीठ की स्थापना के संबंध में उन्हें बताया। काश भारत में भी मणिलाल डाक्टर जैसे भूले-बिसरे क्रांतिकारियों पर ऐतिहासिक शोध तथा प्रामाणिक ग्रंथों का प्रणयन हो सके! इस प्रकार के प्रकाशन हमारे स्वतंत्रता-संग्राम के इतिहास को समझने में भी सहायक सिद्ध होंगे। **–सफदरजंग विस्तार, नई दिल्ली**

पुस्तक समीक्षा

'खोया हुआ कश्मीर (इतिहास के दर्पण में)'

श्री विजय गुप्त बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। वे आशुकवि के रूप में राजधानी के सामाजिक जगत में बहुचर्चित हैं तो उनकी लेखनी ने उन्हें एक उपन्यासकार और नाटककार के रूप में भी साहित्यिक जगत में प्रतिष्ठित किया है। 'खोया हुआ कश्मीर इतिहास के दर्पण में' अब तक प्रकाशित डेढ़ दर्जन कृतियों में से नवीनतम है। यह पुस्तक उस कश्मीर की व्यथा-कथा है, जो खंडित स्वतन्त्र भारत की काया में उभरा एक नासूर है कि जिसने स्वदेश के इतिहास को एक ऐसी पीर दी है कि जिसका निवारण साठ वर्ष के सुदीर्घ काल खंड में भी राष्ट्र के कर्णधार करने में असफल रहे हैं। कश्मीर का एक बड़ा भाग भारत की कोख से ही साम्राज्यवादी षड्यंत्र के फलस्वरूप उभरे पाकिस्तान ने कब्जाया हुआ है और उसका ही पर्याप्त क्षेत्र पड़ोसी चीन को सौंप दिया है। श्री विजय गुप्त सन् १९४५ में कोटली (जम्मू) में जन्मे थे, जो आज भी कश्मीर के कब्जे में है। इस संयोग के कारण श्री गुप्त का जन्म से भी उस धरती से नाता है। विजय गुप्त जिस वैचारिक दर्शन से प्रेरित हैं, जिस चिन्तन ने उन्हें सफल सोद्देश्य साहित्य सृंजन को प्रेरित किया है उसका तो मूलाधार 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' भी है।

इस कृति के रूप में श्री गुप्त ने उस नन्दन वन के उन तथ्यों को एकत्रित समन्वित करने में एक साधक सी भूमिका का निर्वहन किया है जो अतीत के गर्त में निहित है। प्रस्तुत कृति में अनेक ऐसे तथ्यों को उजागर करने का सफल प्रयास किया है जिनसे प्रायः सभी अनभिज्ञ हैं। पुस्तक उस अभागे क्षेत्र की व्यथा-कथा से पाठकों को अवगत कराएगी-जो अब भी पाकिस्तान के अनधिकृत कब्जे में है। वहां के रहने वाले हिन्दू-सिखों ने कठिन दौर में जो दिल दहला देने वाली यातनाएं झेली हैं, उनका हृदय विदारक विवरण तो इस पुस्तक में उपलब्ध है ही साथ ही आक्रान्ताओं का प्रतिरोध करने में उन धर्म योद्धाओं और राष्ट्रभक्तों द्वारा प्रदर्शित बलिदान और साहस की शौर्य कथा भी इसका पठनीय अंश है। कश्मीर के अतीत की इस पुस्तक में झांकी है तो वहां विद्यमान स्थिति का सटीक तथा प्रेरक वर्णन। पुस्तक के रूप में पाठकों को कश्मीर के अतीत और वर्तमान का निष्पक्ष, निर्भीक तथा तथ्य और सत्य से परिपूरित इतिहास के अध्ययन-आकलन का अवसर सुलभ होगा। यह शोधकर्ताओं को भी लाभान्वित करेगी।

कृति : खोया हुआ कश्मीर (इतिहास के दर्पण में)
लेखक : विजय गुप्त
प्रकाशक : अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लि. ४६९७/३, २१ए, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली
पृष्ठ संख्या : १८८, मूल्य : २५०/- रु.

समीक्षक : डॉ. गोविंदबल्लभ जोशी

आर्य समाज, छीटा तख्ता, जवाहर बाजार, टोंक

आर्य समाज मन्दिर टोंक के चुनाव में श्री रूपचन्द जी गर्ग पार्षद, श्री डॉ. जयप्रकाश नारायण **संरक्षक**, श्री रामबाबू गुप्ता **प्रधान**, श्री जगदीश चन्द कसेरा **मंत्री** व श्री बृजमोहन बंसल **कोषाध्यक्ष** चुने गये।

आर्य समाज दिलशाद गार्डन, दिल्ली में समारोह

दिल्ली : दिल्ली विकास प्राधिकरण द्वारा दिलशाद गार्डन के पार्क्रेट/ब्लॉक-सी स्थित प्लाट संख्या आर-९ की भूमि जो कि आर्यसमाज दिलशाद गार्डन को आवंटित की गई है तथा यज्ञशाला व भवन का विधिवत निर्माण के उपलक्ष्य में २६ से २८ अक्टूबर २००७ की अवधि में वेद कथा का आयोजन किया गया। शिलान्यास समारोह २८ अक्टूबर को सम्पन्न किया हुआ। आर्यसमाज के मंत्री श्रीरामचंद्र ने एक वक्तव्य में कहा है कि निर्माण कार्य में बहुत ज्यादा खर्च आयेगा और दिल्ली विकास प्राधिकरण एवं दिल्ली नगर निगम के द्वारा स्वीकृत भवन से संबंधित नक्शे के साथ जारी नियमों के अनुसार हमें भवन निर्माण कार्य जुलाई २००८ से पहले हर हाल में पूरा करना पड़ेगा। आर्य जनों से नम्र निवेदन है कि अपने या अपने प्रभाव से हमें दान रूप में धन देने व दिलवाने की कृपा करें ताकि भवन निर्माण समय से पूर्व ही किया जा सके।

॥ ओ३म् ॥

आर्य समाज हनुमान रोड नई दिल्ली

के

८५वें वार्षिकोत्सव पर

(सोमवार १९ नवम्बर से रविवार २५ नवम्बर २००७ तक)

आप सभी सपरिवार सादर आमंत्रित हैं।

कार्यक्रम :

ऋग्वेद पारायण यज्ञ

यज्ञ : प्रातः ७.३० से ९.३० तक (प्रतिदिन)

ब्रह्मा : श्री राजू वैज्ञानिक

ऋत्विक् : डॉ. कर्णदेव शास्त्री

वेदपाठ : सायं ६.३० से ८.३० बजे (प्रति सायं) गुरुकुल गौतम नगर के ब्रह्मचारियों द्वारा तथा

प्रवचन : श्री राजू वैज्ञानिक

भजन : श्री गुलाब सिंह राघव

आर्य महिला सम्मेलन : मंगलवार, २० नवम्बर, २००७ दोपहर १२ बजे से ५ बजे तक

माता प्रकाशवती बुग्गा स्मारक समूहगान प्रतियोगिता :

शुक्रवार २३ नवम्बर, २००७ प्रातः १०.०० बजे

श्री रतनलाल सहदेव स्मारक भाषण प्रतियोगिता

(शनिवार २४ नवम्बर २००७ प्रातः १०.०० बजे)

रविवार २५ नवम्बर, २००७ प्रातः १०.०० से दोपहर १.३० बजे तक

पूर्णाहुति प्रातः ९.३० बजे एवं सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशन के १२५वें वर्ष के अवसर पर प्रातः १० बजे से विचारगोष्ठी

निवेदक

अरुण प्रकाश वर्मा	सत्यनारायण आर्य	नरेन्द्रसिंह हुड्डा
(प्रधान)	(कोषाध्यक्ष)	(मंत्री)

आईए ''अंतिम विकल्प'' के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सभी बुराईयों के खिलाफ आवाए उठाएं।

''आवाज''
एक शक्ति है।

''अंतिम विकल्प'' जिला, तहसील एवं ग्राम स्तर पर संवाददाताओं के रूप में आपसे सहयोग की अपेक्षा कर रहा है और आपको पत्रकार बनाकर एक जिम्मेदार कार्यकर्ता बनने का न्यौता दे रहा है। पत्रकार बनकर समाज में व्याप्त बुराईयों, भ्रष्टाचार, लूट-खसोट, निर्दोष व गरीबों पर जुल्म या तमाम ऐसा जो कुछ पर्दे के सामने या पीछे हो रहा है, उसका खुलासा करने के लिए आप तैयार हो जाएँ।

इस संदर्भ में हमें शीघ्र मिलें या लिखें :

अंतिम विकल्प

राष्ट्रीय मासिक समाचार पत्रिका

कारपोरेट कार्यालय : 36, एन्ड्रूजगंज मार्केट, नई दिल्ली-110049, फोन : 09899112882

प्रदेश कार्यालय : मौर्य मार्केट, द्वितीय तल, हार्टमैन कालेज रोड, बरेली, फोन : 09358061422

ईमेल : antimbikalp@yahoo.com dps_rathore@yahoo.com

कार्यालय : इम्प्रैशन ग्राफिक्स, 3, छाबड़ा काम्प्लैक्स, अम्बाला रोड, सहारनपुर-247001 (उ.प्र.)

हिन्दी राष्ट्रभाषा प्रचार-प्रसार के लिए, आपके विचारों व आलेखों का स्वागत

–सम्पादक

समाचार-दर्शन

आर्यसमाज विवेक विहार

नई दिल्ली : आर्यसमाज विवेक विहार में २२ अक्टूबर से २८ अक्टूबर तक चतुर्वेद शतक यज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य ब्रह्मदेव वेदालंकार थे। २८ अक्टूबर को पूर्णाहुति पर डॉ. सूर्यदेव शास्त्री तथा आचार्य ब्रह्मदेव वेदालंकार आदि प्रवचनार्थ आमंत्रित थे तथा मुख्यअतिथि के रूप में श्री धर्मपाल आर्य।

आर्यसमाज संदेश विहार

नई दिल्ली : आर्यसमाज संदेश विहार में आयोजित यज्ञ की पूर्णाहुति १४ अक्टूबर को हुई। यज्ञ के ब्रह्मा विख्यात वैदिक विद्वान् डॉ. धर्मवीर थे। अध्यक्षता श्री शशि भूषण मल्होत्रा ने की एवं मुख्य अतिथि श्री मुंशीराम सेठी थे।

आर्य समाज नारायण विहार

दिल्ली : आर्यसमाज नारायण विहार द्वारा १२ से २० अक्टूबर तक क्षेत्र में विभिन्न स्थानों पर यज्ञ का आयोजन किया गया। पूर्णाहुति विजयादशमी पर्व पर आर्यसमाज मंदिर में हुई।

आर्यसमाज नवीन लायलपुर, दिल्ली

दिल्ली : आर्यसमाज नवीन लायलपुर दिल्ली द्वारा गायत्री महायज्ञ का आयोजन १३ एवं १४ अक्टूबर को किया। पूर्णाहुति के अवसर पर योगमुनि वानप्रस्थ एवं छविकृष्ण शास्त्री के प्रवचन हुए।

आर्यसमाज गोविन्दपुरी, नई दिल्ली

नई दिल्ली : आर्यसमाज गोविंदपुरी के तत्वावधान में १६ अक्टूबर से २१ अक्टूबर तक ऋग्वेदीय यज्ञ एवं श्री राम चरित्र कथा आयोजित की गयी। यज्ञ की पूर्णाहुति पर आयोजित कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री पुरुषोत्तम लाल गुप्ता ने की।

आर्यसमाज देवनगर, नई दिल्ली

नई दिल्ली : आर्य समाज देव नगर, नई दिल्ली का वार्षिकोत्सव १ से ४ नवम्बर तक आयोजित हुआ। इस अवसर पर यज्ञ व महिला सम्मेलन भी सम्पन्न हुए।

आर्यसमाज कृष्ण नगर, दिल्ली

दिल्ली : आर्यसमाज कृष्ण नगर, दिल्ली में २२ से २८ अक्टूबर तक आयोजित वेदप्रचार सप्ताह के अन्तर्गत, यज्ञ, महिला सत्संग का भी सफल आयोजन किया गया।

आशुकवि विजय गुप्त के बड़े भ्राता का निधन

नयी दिल्ली। सुविख्यात लेखक, दयानन्द संस्थान के प्रमुख सहयोगी, आशुकवि एवं शिक्षाविद् श्री विजय गुप्त के बड़े भ्राता श्री जगजीत गुप्त का हाल ही में हृदयाघात से निधन हो गया। वह ६१ वर्ष के थे। उनके निधन पर आयोजित श्रद्धांजलि सभा में अनेक आर्य समाजों तथा सामाजिक संगठनों के प्रतिनिधियों ने दिवंगत आत्मा श्री जगजीत गुप्त द्वारा सामाजिक क्षेत्र में की गयी सराहनीय सेवाओं का उल्लेख करते हुए दिवंगत आत्मा की शांति के लिए परम पिता परमात्मा से प्रार्थना की तथा उनके शोकाकुल परिवार के प्रति संवेदना व्यक्त की। दयानन्द संस्थान एवम् जनज्ञान परिवार ने भी दिवंगत आत्मा की शांति हेतु प्रार्थना की तथा परमपिता परमात्मा से शोकाकुल परिवार को इस दु:ख को सहन करने का धैर्य प्रदान करने की प्रार्थना की।

आर्यसमाज हंसापुरी, नागपुर (महाराष्ट्र) का "वेद प्रचार एवं श्रीकृष्ण जन्माष्टमी समारोह" सम्पन्न

नागपुर : आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ के सौजन्य से आर्यसमाज हंसापुरी सैन्ट्रल एवेन्यू रोड नागपुर द्वारा आयोजित वेद प्रचार एवं श्रीकृष्ण जन्माष्टमी समारोह हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। चतुर्वेद शतकम् के पवित्र वैदिक मन्त्रों द्वारा यज्ञ आर्यसमाज के विद्वान प्रधान पं. श्री शिवपूजन मिश्र एवं श्री कृष्ण कुमार शास्त्री जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। आर्य जगत् के विद्वान् आचार्य भगवानदेव वेदालंकार ने 'वैदिक मंत्रों की व्याख्या' मानवोचित व्यवहारिक जीवन से संगति करते हुए प्रस्तुत की। योगीराज श्रीकृष्णचन्द्र के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि श्रीकृष्ण ने जीवन भर दूसरों का हित किया। दुष्टों का नाश किया। अपने चरित्र को सर्वदा उज्ज्वल रखा। दूसरों के सामने अपना मानवोचित उच्चादर्श ही प्रस्तुत किया। पंजाब के प्रसिद्ध संगीतज्ञ श्री जगत् वर्मा ने अपने इल्क्ट्रोनिक म्यूजिक यंत्र से ईश्वर-भक्ति, सत्संग की महिमा, देश-भक्ति तथा आर्यसमाज की आवश्यकता पर सारगर्भित भजन प्रस्तुत किये। समापन समारोह का निर्देशन धर्मवीर आर्य नेता श्री संतोष गुप्ता जी ने किया तथा संयोजन प्रसिद्ध समाजसेवी कर्मठ कार्यकर्ता श्री अशोक यादव जी ने किया।

आप हमारी सहायता इस प्रकार भी कर सकते हैं

१. वेद मन्दिर महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम दिल्ली-३६ में अपनी ओर से अथवा अपने किसी प्रियजन की स्मृति में कुटिया बनवा सकते हैं। जो आजीवन आपकी होगी। इस समय व्यय लगभग दो लाख रुपए होगा। एक कुटिया १५ × १२ फुट की, पीछे शौचालय और स्नानागर ५ × ७ फुट, रसोई ७ × ७ फुट की, आगे बरामदा १२ × ७ फुट। प्रत्येक कुटिया अपने आप में पूर्ण इकाई है। वेदमंदिर में यज्ञशाला, सत्संग भवन, कार्यालय आदि के निर्माण हेतु अधिक से अधिक धनराशि १००, ५००, १००० रुपये अपनी सामर्थ्य के अनुसार स्वयं तथा अपने मित्रों से धन संग्रह करके धनराशि ''दयानन्द संस्थान'' के नाम भेजें। आपका सहयोग ही हमारी शक्ति है।

२. वेद मन्दिर गौशाला में गौ दान करें तथा गउओं के लिए चारा आदि की व्यवस्था हेतु मुक्तहस्त से दान देकर गौरक्षा अभियान में सहयोगी बनें।

३. परमात्मा की अमरवाणी ''चारों वेदों का हिन्दीभाष्य'' मूल्य १८०० रु. अभी १२०० रु. में अपने तथा अधिक से अधिक अपने मित्र परिवारों में पहुंचायें। डाक से मंगाने पर १८० रुपये अधिक लगेंगे।

४. बढ़िया पेपर पर छपा चारों वेदों का हिन्दी भाष्य मूल्य ३२०० रु. अभी २२५० रु. में। डाक से मंगाने पर २०० रु. अधिक लगेंगे।

५. विगत बयातालीस वर्षों से लगातार वैदिक धर्म के प्रचार में संलग्न मासिक ''जनज्ञान'' के सदस्य बनें और अपने मित्रों को बनायें। वार्षिक शुल्क १००/- रुपये है। ग्यारह सौ रुपये में जीवन भर जनज्ञान भेजा जायेगा, साथ ही अभी तीन सौ पचास रुपये का वैदिक साहित्य भी उपहार में प्राप्त करें।

६. प्रतिमास ''जनज्ञान'' की कम से कम दस प्रतियां प्रचारार्थ ६०/- रुपये में मंगाकर बांटें तथा ''जनज्ञान'' मासिक में विज्ञापन देकर हमारे ''राष्ट्र जागृति अभियान'' में सहयोग प्रदान करें।

७. संस्थान ने बीस से अधिक ट्रैक्ट वेदप्रचार तथा हिन्दू जागरण अभियान को गतिमान बनाने हेतु प्रकाशित किए हैं, जिनकी सूची ''जनज्ञान मासिक'' में प्रकाशित होती रहती है। अधिक से अधिक संख्या में मंगाकर बांटें तथा नये संस्करण छापने में सहयोग देकर इस धर्मप्रचार कार्य में हमारे सहयोगी बनें।

अध्यक्ष--दयानन्द संस्थान

प्रभावशाली धार्मिक साहित्य

1.	चारों वेदों का हिन्दी भाष्य	1800 रु.
2.	सामदेव : आध्यात्मिक भाष्य	201 रु.
3.	वेद ज्योति चारों वेदों के चुने गये (100-100 मन्त्रों की व्याख्या)	100 रु.
4.	वेदांजलि : (वर्ष के 365 दिनों के लिए 365 वेद मंत्रों की व्याख्या)	100 रु.
5.	भारत के वीर बच्चों की कहानियां	15 रु.
6.	धरती का स्वर्ग	15 रु.
7.	सरस्वतीन्द्र जीवन (दयानन्द का जीवन चरित्र)	60 रु.
8.	महर्षि दयानन्द सरस्वती (जीवन परिचय)	15 रु.
9.	धर्म का सार (धर्म का रहस्य बताने वाली कथाएं)	15 रु.
10.	स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती (जीवन परिचय)	5 रु.
11.	वैदिक सम्पत्ति	200 रु.
12.	धर्म का मार्ग (धर्म के दस लक्षणों की सरल व्याख्या)	15 रु.
13.	योग और ब्रह्मचर्य	15 रु.
14.	गीत मंजरी (भजनों का अनुपम संग्रह)	20 रु.
15.	Inside the Congress	60 रु.
16.	Life and Teachings of Swami Dayanand	200 रु.
17.	History of the assassins	60 रु.
18.	Concept of God	60 रु.
19.	श्रीमद्दयानन्द प्रकाश	60 रु.
20.	Light of Truth	250 रु.
21.	प्रकृति और सर्ग (आचार्य उदयवीर शास्त्री)	15 रु.
22.	वैदिक गीता का सरल हिन्दी भाष्य	60 रु.
23.	संक्षिप्त महाभारत	80 रु.
24.	संक्षिप्त रामायण	20 रु.
25.	ऋग्वेद शतकम	10 रु.
26.	चतुर्मास की चार पूर्णिमाएं	25 रु.
27.	सत्संग पद्धति	10 रु.
28.	वैदिक सान्ध्य गीत	15 रु.
29.	A Short Life Story of Swami Dayanand	30 रु.
30.	गायत्री मन्त्र का चार्ट, हिन्दी व्याख्या सहित दोनों ओर पत्ती लगा, कम से कम दस प्रति मंगायें	4 रु.

१०० रु. से अधिक धार्मिक साहित्य पर १५ प्रतिशत ३०० रु. से अधिक लेने पर २० प्रतिशत तथा ५०० रु. से अधिक लेने पर २५ प्रतिशत होगा। आदेश के साथ चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।

31.	बृहत्तर भारत-पं. चन्द्रगुप्त वेदालंकार	300 रु.
32.	ईश्वर-(संसार के वैज्ञानिकों की दृष्टि में)	150 रु.
33.	अथर्ववेदीय चिकित्साशास्त्र-स्वामी ब्रह्ममुनि	200 रु.
34.	अथर्ववेदीय मन्त्रविद्या-स्वामी ब्रह्ममुनि	100 रु.
35.	मोपला (उपन्यास)-वीर सावरकर	10.00 रु.
36.	वीर सावरकर-संक्षिप्त जीवन परिचय	5.00 रु.
37.	भाई परमानन्द (जीवन परिचय)	30.00 रु.
38.	बाल सत्यार्थ प्रकाश	60.00 रु.
39.	मां गायत्री	2.00 रु.
40.	स्वास्थ्य का महान शत्रु अंडा	2.00 रु.
41.	विश्व को वेद का संदेश	3.00 रु.
42.	विश्व को आर्यसमाज का संदेश	3.00 रु.
43.	Great Gayatri	2.00 रु.

हिन्दू धर्म रक्षक साहित्य बांटिये

1.	क्या आप सारा भारत दारुल इस्लाम बनने देंगे?	3.00 रु.
2.	हिन्दुओं को चेतावनी-वेदभिक्षु:	2.00 रु.
3.	भारत के मुसलमानों का क्या करें? -वेदभिक्षु:	2.00 रु.
4.	हम सब हिन्दू हैं-सावरकर	2.00 रु.
5.	इस्लाम में क्या है? -राकेश रानी	2.00 रु.
6.	इस्लामिस्तान बनाने की तैयारियाँ -जहीर नियाजी	2.00 रु.
7.	हिन्दू जागो ! देश बचाओ	2.00 रु.
8.	इस्लाम-एक परिचय	2.00 रु.
9.	पोप की सेना का भारत पर हमला - वेदभिक्षु:	2.00 रु.
10.	पादरियों को चुनौती	2.00 रु.
11.	बाईबिल को चुनौती	2.00 रु.
12.	क्या ईसा ख़ुदा का बेटा था?	2.00 रु.
13.	और पादरी भाग गया	2.00 रु.
14.	बाइबल कसौटी पर	4.00 रु.
15.	Bible in the Balance	3.00 रु.
16.	हमने इस्लाम क्यों छोड़ा?	2.00 रु.
17.	क्या भारत का एक और विभाजन होगा?	2.00 रु.
18.	हिन्दू राष्ट्र के नाम मां का संदेश	2.00 रु.
19.	हिन्दू जागेगा, देश का संकट भागेगा	2.00 रु.
20.	A challange to the Christian Faith	50 पैसे

एक रुपये वाली "हिन्दू धर्म रक्षक" साहित्य की १००० पुस्तकें मंगाने पर ५० प्रतिशत और ५०० पुस्तकें मंगाने पर २५ प्रतिशत कमीशन है। प्रत्येक आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा कम से कम चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।

व्यवस्थापक-दयानन्द संस्थान

२२८६-आर्यसमाज मार्ग, नई दिल्ली-५

मुफ्त प्राप्त करें

* * *

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य मूल्य १८००/- रुपये
बढ़िया वैदिक साहित्य मूल्य ५००/- रुपये
जनज्ञान मासिक ११००/- रुपये

* * *

३४०० रुपये का साहित्य उपहार भेंट किया जायेगा--मात्र २१०० रुपये सहयोग राशि प्रदान कर दयानन्द संस्थान के "संरक्षक सदस्य" बनें।

- परमपिता परमात्मा की अमर वाणी "**चारों वेदों का हिन्दी भाष्य**" द्वारा अपने गृह एवं पूजास्थल को आलोकित करें। अपने मित्र परिवारों को भेंट में दें।
- "**जनज्ञान मासिक**" आपके परिवार को वैदिक संस्कृति, विशुद्ध राष्ट्रवाद और राष्ट्रीय एकता के प्रेरक भावों और संस्कारों की ओर प्रेरित कर उसे स्वर्गोपम बनाने में सहायक सिद्ध होगा।

प्रत्येक सदस्य सदैव शुभ अवसर पर एक नया संरक्षक सदस्य बनाकर सहयोग का हाथ बढ़ाएं तथा अपनी पवित्र आय से मात्र २१०१/- रुपए की लघु राशि प्रदान कर पुण्य के भागी बनें।

वेदप्रकाश सिंह	पद्मश्री डॉ. श्यामसिंह शशि	राकेश रानी
(अमरीका में संस्थान के प्रतिनिधि)	*संरक्षक*	*अध्यक्ष*
संपादक 'सौरभ' न्यूयार्क	*दयानन्द संस्थान*	*दयानन्द संस्थान*
८०-१५, ४१ AVENU APARTMENT २४१	*सहयोग मंडल*	*एवं सम्पादक 'जनज्ञान'*
NEWYORK ELMHURT	*नई दिल्ली*	*नई दिल्ली*

सहयोग राशि "दयानन्द संस्थान" के नाम निम्न पते पर प्रेषित कीजिए :

दयानन्द संस्थान, २२८६, आर्यसमाज मार्ग, करौलबाग, नई दिल्ली-११०००५

दूरभाष : ४१००४७४१, ४१०१५४५७

जन-ज्ञान (मासिक) २२८६, आर्यसमाज मार्ग करौल बाग, नई दिल्ली-५	कार्तिक-मार्गशीर्ष सम्वत्-२०६४ नवम्बर-सन्-२००७	Delhi Postal Regn. No. DL(C)-01/1114/06-08 R. N. 10719/65 Posted at N. D. PSO on Dates 5 & 6 of November 2007

ओ३म्

मन प्राणों में वेद पले
दु:ख कष्ट से मुक्ति मिले

वेद नहीं जिसके घर में
हिन्दु न कहलाए जग में

वेद सृष्टि का मूल महान
आर्य जनों, यह लो पहचान

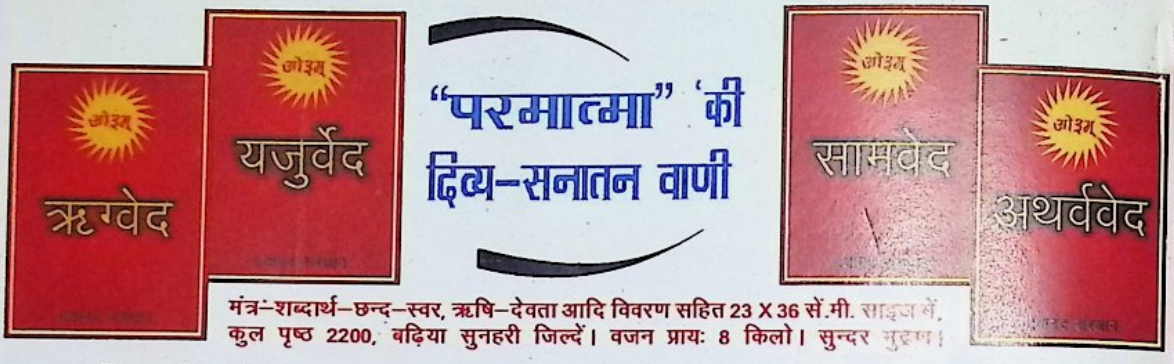

मंत्र-शब्दार्थ-छन्द-स्वर, ऋषि-देवता आदि विवरण सहित 23 X 36 सें.मी. साइज में, कुल पृष्ठ 2200, बढ़िया सुनहरी जिल्दें। वजन प्रायः 8 किलो। सुन्दर मुद्रण।

चारों वेदों का सरल, रोचक हिन्दी भाष्य

महर्षि दयानन्द कृत हिन्दी भाष्य, मूल संस्कृत सहित

अभी वेद घर में लाओ, शुद्ध आर्य जन कहलाओ

प्रसारार्थ लागत मूल्य
रु.1800/=
अभी मात्र 1200/= में प्राप्त करें
डाक व्यय पृथक

श्रेष्ठ बढ़िया कागज़ पर लागत मूल्य 3200/-
अभी लेने पर 2250/-

कृपया आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।

अधिक विवरण व राशि भेजने के लिए:
दयानंद संस्थान, 2286 आर्यसमाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-110005, (भारत)
प्रधान कार्यालय: महात्मा वेदभिक्षु: सेवाश्रम, इब्राहीमपुर, पो. मुखमेलपुर, दिल्ली-1100036 (भारत)
दूरभाष - 45415457, 25724741
दूरभाष -
साइबरसेपियन्स 23512929,23551818